प्रस्तावना

भारतीय ज्ञान परम्परा में साधु–संतों का सत्संग सर्वोपरि माना जाता है। प्राचीन काल से ही प्रज्ञावन संत समाज का सभी क्षेत्रों में मार्गदर्षन करते है। इनमें संत अध्यात्म क्षेत्र, दर्शन, साहित्य जगत में अपना शीर्षस्थ स्थान बनाएं रखने में सफल रहे है। संत गंगादास साहित्य और अध्यात्म क्षेत्र में लोक प्रिय रहे है। **'संत गंगादास के कृतित्व को रेखांकित करते हुए, नागरी लिपि परिषद् के महामंत्री–डॉ0 हरि सिंह पाल लिखते है।'**

"आज संत गंगादास को आधुनिक काल के प्रथम एवं खड़ी बोली के प्रथम समर्थ कवि के रूप में प्रतिष्ठा मिली है। दास जी ज्ञान, भक्ति, और काव्य की दृष्टि से अपने समय के महान रचनाकार थे, किन्तु हिन्दी साहित्य के अध्येयता की दृष्टि से ओझल हो जाने के कारण हिन्दी साहित्य के इतिहास में अपना वांछित स्थान न प्राप्त कर सके।"

हिन्दी अलोचकों का ध्यान महाकवि दास जी की विपुल साहित्य साधना की ओर गया। तो सभी हतप्रभ रह गए कि इतना विपुल साहितय रचने वाला महान संत अब तक कैसे शीर्षस्थ रचनाकारों की सूची से बाहर रहे, दास जी ने अपनी काव्य प्रतिभा से अनेक सुन्दर छंदों और कृतों द्वारा खड़ी बोली

के कलापूर्ण एवं सुन्दर काव्य की रचना कर सभी को अचंभित कर दिया था। संगीतात्मक, कोमलकांत, पदावली, भावान्विति ध्येयता आदि की दृष्टि से दास जी का काव्य उच्चकोटि का है। इनके काव्य में लोक संस्कृति पूर्णरूप से प्रतिबिम्बित हुई है।

संत गंगादास ने अपने क्षेत्र विशेष में प्रयुक्त शब्दावली देसज भाषा और लोकोक्तियों का प्रयोग कर एक प्रयोधर्मी रचनाकर की भूमिका का सफल निर्वहन किया है। यही कारण है वही दूसरी ओर आम जन मानस का अज्ञान के कूप से ज्ञान के प्रकाश में लाने का भी प्रयास करता है। इस प्रकार संत दास जी का काव्य रीतिकाल के अवसान के उपरान्त आरम्भ होने वाले आधुनिक काव्य का प्रथम काव्य है, जो पश्चिमी उत्तर प्रदेश की लोक संस्कृति और प्रवृत्तियों को समेटकर चला है और साथ ही राष्ट्रीय एवं समाज के पुनजागरण के प्रति आधुनिक दृष्टिकोण अपनाकर हिन्दी साहित्य जगत का प्रकाश स्तम्भ का भी कार्य करता है। इस महान संत और महान कवि के काव्य का सम्यक और यथावांछित अनुशीलन आज की आवश्कता है।

उजर नही आपसे, बेचो या लो मोल।
हाथ आपके नाव है बांधो या दो खेल।।
बांधो या दो खोल, पशु है आज तुम्हारे।
जो चाहे सो करो दास महाराज तुम्हारे।।

"1970 में संत गंगादास की खोज हुई थी, तब हिन्दी साहित्य इस कवि तथा इनके काव्य से पूर्णता अनभिज्ञ थे। आगरा विश्वविद्यालय के तत्त्वावधान में इस कवि के प्रथम शोधार्थी डॉ0 जगन्नाथ शर्मा 'हंस' का एतदविषयक शोधप्रबन्ध स्वीकृत हुआ तो डॉ0 रामकुमार वर्मा, डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी, विजयेन्द्र स्नातक आदि हिन्दी साहित्य के मनीषियों ने इस कार्य की भूरि–भूरि प्रशांस की।"

संत गंगादास की वाणी ज्ञान, भक्ति और राष्ट्रीय भावना की त्रिवेणी है। खड़ी बोली काव्य का स्वाभाविक रूप भारतेंदु से भी पहले इनके काव्य में उपलब्ध होता है।

'संत गंगादास को खड़ी बोली काव्य का 'भीष्म पितामह' कहा गया है।'

संत गंगादास झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के गुरू थे। जिनके वचनों से प्रेरित हो कर झांसी की रानी लक्ष्मीबाई ने अपने सम्पूर्ण जीवन को देश को समर्पित कर दिया था। जीवन में गुरू का विशेष महत्व है और मनुष्य को सदैव अपने गुरू का सम्मान और आदर करना चाहिए। अपने गुरू के आर्शीवाद से मानव अपने जीवन में सफलता की मंजिल प्राप्त करता है।

मानव जीवन में गुरू का जो महत्व है। भगवान से भी अधिक महत्वपूर्ण स्थान होता है। मनुष्य के जीवन में एक गुरू का होना अति आवश्यक है क्योंकि गुरू के ज्ञान से मानव के जीवन में अज्ञानरूपी अंधकार को दूर करता है।

गुरू सच्चे पथ प्रदर्शक होते है। गुरू हमें शिक्षा देकर इस जीवन को सही से जीवन–यापन करने की शिक्षा देते है और मार्ग दर्शन करते है।

मानव की सफलता का मुख्य स्त्रोत गुरू के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करना है। अपने शिष्य का उचित मार्गदर्शन करने के कारण ही गुरू को उजाले का दीप माना जाता है। गुरू के बिना व्यक्ति का जीवन अधूरा है। गुरू के सहयोग से ही व्यक्ति सफल बनता है। **"वह व्यक्ति जो ज्ञान से जीवन आसान बनाता है,हमारे लिए गुरू कह लाइ।"**

गुरू की शिक्षा मानव को जीवन भर काम आती है। उनका आर्शीवाद शिष्यों के लिए अनमोल है।

हमारे जीवन में के मुख्य तीन गुरू महत्वपूर्ण है–

1. माता–पिता
2. शिक्षक
3. जीवन

भारतीय संस्कृति में सदैव गुरू और शिष्यों का महत्व बताया गया है। इनको सम्मान और विश्वास देना महत्वपूर्ण है। गुरू हमें सिखाते और जीवन जीने में मदद करते है। वे ज्ञान और अनुभव से हमारे मन और जीवन से नकारात्मक ऊर्जा है। हमारे सम्पूर्ण जीवन तीन गुरू विशेष प्रभावी का है।

गुरूवों का आधार है। प्रथम गुरू हमारे सम्पूर्ण जीवन तीन गुरू विशेष प्रभावी का है। माता–पिता जो हमें जीवन देते है,

द्वितीय गुरू शिक्षक जो मानव को मानवता और नैतिकता का ज्ञान देते है, समाज और देश के योग्य बनाते है। तृतीय गुरू स्वयं मानव का जीवन होता है। मानव के स्वयं के अनुभव पर निर्भर होता है, जो सबका स्वामी है। जीवन का स्वामी सबसें बड़ा गुरू होता है, वक्त जो मानव को सिखाता है, वह कोई नही सिखाता।

संत गंगादास पर लघु–शोध करने के लिये हमें उन शोधकारियों से जानकार प्राप्त की, जिन्होंने संत गंगादास के जीवन और कृतियों पर शोध किया था। डां0 कर्मवीर सिंह, डां0 हरि पाल सिंह और डां0 जगन्नाथ शर्मा 'हंस' के मार्गदर्शन और उन से प्राप्त जानकारियों ने मेरे शोध को लिखने में अधिक सहायता की और उनके सहयोग से मेरा शोध पूर्ण है। सभी गुरूजनो को मेरा ह्रदय से प्रणाम और धन्यवाद।

महात्मा गंगादास के विषय जो एक विद्यार्थी के रूप में जो ज्ञान प्राप्त हुआ है। सर्वप्रथम अपने शोध निर्देषक हिन्दी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग के आदरणीय डॉ0 पवन अग्रवाल जी के निर्देषन एवं मार्गदर्शन में यह लघुशोध–प्रबन्ध अपनी पूर्णता को प्राप्त हुआ है।

हिन्दी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, लखनऊ विश्वविद्यायल के विभागाध्यक्ष प्रो. रश्मि कुमार एवं विभाग के समस्त गुरूजनों के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करती हूं। जिनका आर्शीवाद सदैव प्राप्त रहे।

स्वाती जायसवाल
शोधार्थी एम.ए. चतुर्थ सेम.
हिन्दी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यायल

अध्याय–1

हिन्दी साहित्य का भक्ति काल

भक्तिकाल में सगुण भक्ति और निर्गुण भक्ति शाखा के अंतर्गत आने वाले प्रमुख कवि है– कबीर दास, तुलसीदास, सूरदास, मीराबाई, रसखान, ध्रुवदास, चैतन्य महाप्रभु, रहीम दास आदि थे। की मानी गायी है। यह हिंदी साहित्य का श्रेष्ठ युग है। जिसको जार्ज ग्रियर्सन ने स्वर्णकाल, श्यमासुंदर दास ने स्वर्ण युग, शुक्ल जी ने भक्ति काल एवं हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लोक जागरण कहा है।

हिंदी साहित्य में भक्ति काल का अपना विषेष महत्व है। भारत एक ऐसा देष है, जिसमे भिन्न–भिन्न जाति समप्रदाय और भाषाओं के व्यक्ति रहते है। हिंदी साहित्य में यह विभिन्नता देखने को मिलती है।

इस देष में विभिन्न महात्माओ का जन्म हुआ और उन्होंने समाज और देष को नवीन विचारा धारा और दृष्टिकोण दिया। प्रसिद्ध विद्वान ग्रियर्सन ने हिंदी साहित्य के इतिहास में भक्ति काल को हिंदी साहित्य का स्वर्ण युग कहा है।

हिंदी साहित्य के चार कालों में केवल भक्ति काल अपने समाजिक, नैतिकता के कारण साहित्यिक मान्यताओं के आधार पर भक्ति काल को स्वर्ण युग कहा जाता है। इस काल को स्वर्णकाल या स्वर्ण युग कने का सबसे बड़ा कारण है कि इस काल में ही षताब्दियों से चली आ रही दासता की बेड़ियों को तोड़ने के लिए मानवतावादी, तर्कषील कवियों और समाज सुधारकों का उदय हुआ। इस युग में रामानंद, बल्लभाचार्य, कबीर,

सूर, तुलसी, जायसी, मीरा, रैदास, रसखान, रहीम आदि ने देषभक्ति की लहरों को जगाते हुए मानवतावाद का दिव्य संदेष दिया।

इस काल में ही राष्ट्रीय–भावना और सामाजिक जागृति का अभ्युदय हुआ। दासता की बेडियों को तोड़ने व एक वर्ग को विषिष्ट सिद्ध करने के लिए बनी परम्पराओं का खण्ड़न करने का क्रान्तिकारी आंदोलन हुये। संकुचित राष्ट्रीयता के स्थान पर समग्र राष्ट्र का स्वरूप सामने आने लगा। एक वैचारिक क्रान्ति की ध्वनि गूंजित होने लगी और समाज आधुनिकता की दिषा में आगे बढ़ने लगे।

हिन्दी साहित्य का स्वर्ण युग भक्ति काल डां0 चरण भक्ति काल का वर्गीकरण किया – भक्ति काल की मुख्य दो शाखाएं है।

1. निर्गुण काव्यधारा – संत काव्यधारा – सूफी काव्यधारा
2. सगुण काव्यधारा – राम काव्यधारा – कृष्ण काव्यधारा

निर्गुण भक्ति के दो भेद – ज्ञानश्रयी – प्रेमाश्रयी

भक्ति काल का उदय दक्षिण भारत में आलवार भक्तों द्वारा हुआ। इसका मुख्य उद्देष्य सामाजिक, दार्षनिक आधार भी था। धीरे–धीरे भक्ति ने अखिल भारतीय रूप ग्रहण कर लिया। भक्ति का बाह्य और आन्तिरिक स्वरूप को सुनिष्चित करने में चार आचार्य मुख्य थे। रामानुज, महवाचार्या, निम्बाक। और वल्लभ।

भक्ति आंदोलन का आरम्भ दक्षिण भारत में आलवारों एव ंनायनारों से हुआ जो कालान्तर मे (800 ई–1700 ई) उत्तर भारत सहित सम्पूर्ण दक्षिण एषिया में फैला गया। इस हिन्दू क्रान्तिकारी अभियान के नेता शंकराचार्य थे, जो एक महान विचारक और दार्षर्निक थे।

भक्तिकालीन साहित्य लोगो के जीवन और संस्कृतिक परम्पराओं को व्यक्त करने वाली कविता है। वर्ग तथा वर्ण–व्यवस्था से जर्जर, सामाजिक ऊंच–नीच की भावना से आक्रान्त, नाना प्रकार के धार्मिक भेद–भाव, कर्मकाण्ड तथा विधिनिषेधों से परिचालित समाज में भक्तिकालीन साहित्य एक संजीवनी का काम किया।

डां0 श्याम सुंदर दास ने भक्ति काल के सम्बन्ध में लिखा है– जिस युग में कबीर, जायसी, तुलसी, सूर सुप्रसिद्ध कवियों और माहत्मा की दिव्य वाणी उनके अन्तःकरण से निकल देष के कोने–कोने में फैली थी। उसे इतिहास में सामान्य भक्ति युग कहते है। निषचित ही यह हिन्दी का स्वर्ण युग था। इस कथन का भी यही आषय है कि भक्ति काल अपने पूर्ववर्ती कालों से श्रेष्ठ है।

भक्ति काल सामाजिक–ऐतिहासिक आधार पर रामचनद्र शुक्ल के अनुसार भक्ति भावना का कारण भारत मे आक्रमणकारी मुसलमानों का विजेता होना है। शुक्ल जी उत्तर भारत के हिन्दू जनता की पराजित मानसिमता को रेखांकित करा चाहते हो, जो भक्ति के प्रचार –प्रसार के लिये अनुकुल भूमि बनी।

डां0 चरण भक्ति काल की संवत् 1375 से 1700 संवत् तक मानी जाती है। भक्ति काल हिन्दी साहित्य का सबसे महत्वपूर्ण काल है। जिसे इसकी विषेषताओं के कारण स्वर्ण युग का जाता है। राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, दार्षर्निक साहित्यिक एवं मुसंस्कृतिक दृष्टि से अंतविरोधों से परिपूर्ण है, इस काल में भक्ति की ऐसी धारा प्रवाहित हुई कि विद्वानों ने एकमत से हिंदी साहित्य का और समाज एक बार फिर से आस्थावान् हो उठा। कबीर ने तो हिन्दूओं और मुसलमानों दोनो को चेताया और अपनी–अपनी कुरीतियों को छोड़कर उनसे मानव धर्म का

निर्वाह करने के लिए कहा। इस दृष्टि से कबर सबसे बड़े समाज सुधारक कहे जा सकते है।

लोक कल्याण की भावना– भक्तिकाल का साहित्य लोक मगंल के महान आदर्ष द्वारा अनुप्राणित है। इसमे सत्य, उल्लास, आनन्द और युगनिर्माणकारिणी प्रेरणा है। भारतीय जनता उस युग में इस साहित्य से प्रेरणा और षक्ति पाती रही है, वर्तमान में भी उसे तृप्ति मिल रही है और भविष्य में भी उसका संबल बना रहेगा, तुलसीदास ने लोक कल्याण को साहित्य का मूल उद्देष्य माना है। तुलसी ने अपने इस आदर्ष की रक्षा के लिए राम तथा सूर ने कृष्ण जी को लोक–रंजक, ने रक्षक चरित्र को जनता के समाने प्रस्तुत किया। कबीर ने सभी सम्प्रदायों में एकता नायक लाने का प्रयास किया। इन सब में लोक कल्याण की भावना सर्वोपरि दृष्टिगोचर है।

कीरति भनिति भलि सोई।

सुरसरि सम सब का हित होई।

भारतीय संस्कृति के आदर्ष की स्थापना– इस काल के सभी कवियों में भारतीय संस्कृति और उसके आदर्षो के प्रति गहरी आस्था है। भारतीय धर्म, दर्षन, संस्कृति और सभ्यता, आचार और विचार भक्ति साहित्य के सुंदर कलवर में सुाक्षित है। इसमें सगुण निर्गुण, भक्ति, योग, दार्षनिकता, आध्यात्मिकता और आदर्ष जीवन के भव्य चित्र सन्निहित है। कुल मिलाकर भक्ति साहित्य तत्कालीन जनता का उन्नायक प्रेरक एवं उद्धारकर्ता है। वह भारतीय संस्कृति का सषक्त उपदेष्टा है। राम, कृष्ण, अलख निरंजन और ओंकार का स्मारक है। जो आज भी हिन्दू जन–जीवन के लिए प्रातः स्मारणीय है।

समन्वयकारी साहित्य– भक्ति साहित्य साम्प्रदायिक संकीर्णताओं से ऊपर उठा हुआ महान साहित्य है, जिसमे समन्वय की महान चेष्टा दिखाई पड़ती है। इस साहित्य में ऐसी भावनाओं का समावेष है, जिनका इस्लाम धर्म से कोई विरोध नही है। रामचरित्रमानस में समन्वय का यह स्वरूप अत्यंत भव्य रूप में दिखाई देता है। तुलसीदरस ने ज्ञान, भक्ति और कर्म का समन्वय करके तीर्थ राज प्रयाग का निर्माण किया है। वे सबको सीताराम मय मानकर प्राणम करते है।

आधुनिक काल में भक्ति का महत्व – आधुनिक काल में भक्ति का एक अलग ही रूप देखने को मिलता है, क्योकि आधुनिक काल में मानव पाष्चात् सभ्यता की ओर आकर्षित हो रहा है। उससे भारतीय सभ्यता और भक्ति श्रेष्ठ नही लगती है, लेकिन कुछ मानव अपनी सभ्यता और संस्कृति से अधिक गहारई से जुड़े है। जो आज भी मानव जाति को एक नयी दिषा और दृष्टिकोण समाज को दे रहे है, किन्तु विदेषी लोग भारतीय सभ्यता और संस्कृति की ओर आकर्षित हो रहे है।

आज का मानव अपनी संस्कृति और सभ्यता से दूर होने का मुख्य कारण हमारे देष की षिक्षा व्यवस्था ऐसी हो गयी है कि लोग अपनी मातृभाषा से दूर हो गये है। अपनी संस्कृति और सभ्यता के विषय में ज्ञान प्राप्त करने के लिए अपनी मातृभाषा का ज्ञान होना अति आवष्यक है।[1]

संत गंगादास सम्प्रदाय में दीक्षित तथा संतों की समन्वयकारी चिन्ताधारा से प्रभावित होने के कारण संत गंगादास अपने आराध्य को तीनों रूपों निगुण, निराकार, सगुण निराकार एवं सगुणसाकार में देखते प्रतीत होते है।

सतगुरू तुझे पार लगावैं।

सिर तार दे उतराई में।

है 'विवेक' का जहाज मेरा।

दे उतराई बैठ सवेरा।।[2]

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास – विश्वनाथ त्रिपाठी
2. महात्मा गंगादास और उनका काव्य–हंस शर्मा कृतित्व पृ.सं. 311।

अध्याय–2
संत महात्माओं का संक्षिप्त परिचय

भारत देष एक विषाल देष है। इस देष में समय–समय पर संत और महात्माओं का जन्म हुआ है। कभी श्रीराम, श्रीकृष्ण महात्मा बुद्ध, महात्मा जैन, कबीर, सूर, तुलसी आदि महात्माओं के दार्षनिक विचारों ने समाज, देष और विष्व को एक नया मार्ग दिखाया और हमारे भारत देष सदैव गौरवमय किया। इन महात्मों ने समाज और समाज के मानव जाति के लिये सदैव एक उदाहरण प्रस्तुत किया। जिसके कारण आज मानव जाति आज उन्हें अपना आदर्ष मानती है। जैसे आधुनिक काल में राजा राम मोहन राय, ईष्वर चन्द्र विद्यासागर, स्वामी विवेकानंद, महात्मा गांधी, डां0 आंबेडकर आदि बहुत से ऐसे व्यक्तियों का जन्म हुआ है। जो समाज और देष के विकास के लिए अपना संपूर्ण जीवन देष को समर्पित कर दिया।

मानव जाति उन महात्मों के विचारों को स्वीकार नही करती है लेकिन उनके नाम के मंदिर बनाकर उनकी पूजा अर्चना अवष्य की जाती है। आज के समय में संतो और महात्माओं का स्परूप बदल गया है। आज भी समाज में अनेक कुरीतियां है जिनका

विरोध मानव जाति में सदैव चलता रहा है और चलता रहेगा। जातिवाद इसका सबसें बड़ा उदाहरण है।

महात्मा बुद्ध

बुद्ध का जन्म लुंबिनी में ईसा पूर्व इक्ष्वाकु वंशीय क्षत्रिय शाक्य कुल के राजा शुद्धोधन के घर में हुआ था। मां का नाम महामाया था जो कोलय वंश से थी, जिनका इनके जन्म के सात दिन बाद निधन हुआ, उनका पालन महारानी बहन महाप्रजापती गौतमी ने किया । 29 वर्ष की आयु में सिद्धार्थ विवाहोपरांत एक मात्र प्रथम नवजात षिषु राहुल और धर्मपत्नी यषोधरा को त्यागकर संसार को जर, मरण, दुःखों से मुक्ति दिलाने के मार्ग एवं सत्य दिव्य ज्ञान की खोज में रात्रि में राजपाठ मोह त्यागकर वन की ओर चले गए। वषों कठोर तपस्या के पष्चात् बोध गया में बोधिवृक्ष के नीचे उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ और वे कोटा वेंकटचलम के अनुसार गौतम बुद्ध का जन्म 1887 में तथा निर्वाण 1807 में हुआ था।

भारतीय दार्षनिक, सुधारक, बौद्ध धर्म के संस्थापक एवं प्रवर्तक थे। बुद्ध भारत ही नही बल्कि संपूर्ण विष्व के ऐसे महापुरूषों में षामिल रहे जिन्होंने सम्पूर्ण मानवजाति पर एक विषेष स्थान स्थापित किया। बुद्ध जी ने जो उपदेष दिये है, वह

संपूर्ण मानव जाति के लिये है न कि केवल बौद्ध धर्म के अनुयायियों के लिये नही है।

भगवन बुद्ध से प्रेरणा – हम उस देश के वासी है, जिसमें दुनियां को युद्ध नही बुद्ध दिये है– प्रधानमंत्री–मोदी जी

प्रधानमंत्री मोदी जी निरंतर भारत की आध्यात्मिक शक्ति की न केवल राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति में केन्द्रीयता पर जो दिया है। मोदी जी सदा ही भारत की आध्यात्मिक शक्ति को देष का भाग्य विधाता और गुलामी के वर्षों में आषा की संजीवनी के रूप में देखा है।

गौतम बुद्ध संन्यासी बनने से पहले कपिलवस्तु के राजकुमार सिद्धार्थ थे। लोगों के दुःखों को देखकर और शांति की खोज में 27 वर्ष की उम्र में घर परिवार, राजपाट आदि छोड़कर चले गये। भ्रमण करते हुये सिद्धात काशी के समीप सारनाथ पहुंच, जहां उन्होंने धर्म परिवर्तन किया। इसके बाद बोधगया में बोधि वृक्ष के नीचे कठोर तप किया और महान संन्यासी गौतम बुद्ध के नाम से प्रचलित हुये और अपने ज्ञान से समूचे विष्व को प्रकाषमय किया।

बुद्ध ने जब अपने युग की जनता को धार्मिक, सामाजिक, आध्यात्मिक एवं अन्य यज्ञादि अनुष्ठानों को लेकर अज्ञान में घिरा देख, साधारण जनता को धर्म के नाम अज्ञान में पाया, नारी को

अपमानित होते देखा, शूद्रों के प्रति अत्याचार होते देखा तो उनका मन जनता के लिए उद्वेलित हो उठा।

बुद्ध जी वर्षों तक वनों में घूम–घूम कर तथा तपस्या करके आत्मा को ज्ञान से आलोकित किया। उन्होने जीवन के प्रत्येक क्षण को जिस चैतन्य एवं प्रकाश के साथ जिया वह भारतीय ऋषियों की परमपरा के इतिहास का महत्वपूर्ण अध्याय है।

बुद्ध ने लगभग 40 वर्ष तक घूम–घूम कर अपने सिद्धांतों का प्रचार प्रसार किया। वे उन शीर्ष महात्माओं में से थे। जिहोंने अपने ही जीवन में अपने सिद्धांतों का प्रसार तेजी से होता और अपने द्वारा लगाये गये पौधे को वट वृक्ष बन कर पल्लवित होतें स्वयं देखा। बुद्ध ने सरल और सहज वाणी का प्रयोग किया और अपने विचारों को समान्य जन तक पहुंचाया । अपने धर्म प्रचार में उन्होंने समाज के सभी वर्गों अमीर–गरीब ऊंच–नीच तथा स्त्री–पुरूष को समानता के आधार पर सम्मितिल किया।

बुद्ध संन्यसी बनकर अपने आप को आत्मा और परमात्मा के निरर्थक विवादों की अपेक्षा समाज कल्याण की और अधिक ध्यान दिया। उनके उपदेष मानव को दुःख एवं पीड़ा से मुक्ति के माध्यम बने, साथ–साथ सामाजिक एवं संसारिक समस्याओं के समाधान के प्रेरक बने, जो जीवन को सुन्दर बनाने एवं मानवीय मूल्यों को लोकचित्र मे संकलित करने में विषिष्ट स्थान रखते है।

डां0 भीमराव अंबेडकर – अंबेडकर ने भारी संख्या में अपने अनुयायियों के साथ बौद्ध मत को स्वीकार किया ताकि हिन्दू समाज में उन्हें बराबरी का स्थान प्राप्त हो सके। मूलतः बौद्ध धर्म के अनुरूप ही रहा और हिन्दू धर्म के भीतर ही रहकर महात्मा बुद्ध ने एक क्रान्तिकारी और सुधारवादी आंदोलन चलाया।

एक जलते हुये दीपक से हजारों,
दीपक रोषन किये जा सकते है,
फिर उस दीपक की रोषनी कम नही होती है

–महात्मा बुद्ध

महात्मा बुद्ध का पुनजागरण के अग्रदूत

विष्व में कुछ ऐसे महापुरूष रहे। जिन्होंने अपने जीवन काल से समस्त मानव जाति को नई राह दिखाई है। उन्ही में से एक महान विभूति गौतम बुद्ध थे, जिन्हें महात्मा बुद्ध के नाम जाना जाता है। दुनियां को अपने विचारों से नया मार्ग दिखाने वाले महात्मा बुद्ध भारत के एक महान दार्षनिक ,समाज सुधारक और बौध धर्म के संस्थापक थे। भारतीय वैदिक परंपरा में धीरे–धीरे जो कुरीतियां पनप गई थी। उन्हें पहली बार चुनौती बुद्ध जी ने दी थी।

बुद्ध का दर्षन –

1. बुद्ध के दर्षन का सबसे महत्वपूर्ण विचार आत्मा दीपो भवः अर्थात् अपने दीपक स्वयं बनो।
2. संवेदनषीलता का अर्थ है दूसरे के दुःखों को अनुभव करने की क्षमता।
3. बुद्ध का प्रमुख विचार हृदय परिवर्तन के विष्वास से है बुद्ध को इस बात पर अत्यधिक विष्वास था कि हर व्यक्ति के भीतर अच्छा बनने की संभावनाएं होती है। जरूरी यह है कि उस पर विष्वास किया जाये और समुचित परिस्थितियों प्रदान की जाये।
4. बुद्ध का सबसे कमजोर विचार उनका यह विष्वास है कि संपूर्ण जीवन दुखमय है, जीवन को न तो सिर्फ सुखमय दुखमय ही कहा जा सकता है, सत्य तो यह है, कि सुखों की अभिलाषा ही वे प्रेरणाएं है जो व्यक्ति को जीवन के प्रति उत्साहित करती है।

आज दुनियां में तमाम तरह के झगड़े है जैसे सांप्रदायिकता आतंकवाद, नक्सलवाद, नस्लवाद तथा जातिवाद आदि इन सभी समस्याओं के मूल में बुनियाद दार्षनिक समस्या यही है कि कोई भी व्यक्ति अपने देष या संस्था अपने दृष्टिकोण से पीछे हटने को तैयार नही है।

महात्मा बुद्ध के माध्यम मार्ग सिद्धांत को स्वीकार करतें ही हमार नैतिक दृष्टिकोण बेहतर हो जाता है। हम यह मानने लगते

है कि कोई घातक होता है। यह विचार हमें विभिन्न दृष्टिकोण के मेल–मिलाप तथा आम सहमति प्राप्त करने की ओर ले जाता है।

महात्मा बुद्ध भारतीय विरासत के एक महान विभूति है। उन्होने संपूर्ण सभ्यता को एक नई राह दिखाई। बुद्ध ने सत्य के बारे में कहा है कि तीन चीजे अधिक देर तक नही छुप सकती है। सूर्य, चंद्रमा और सत्य।

संत और महात्माओं ने सदैव ही देष, समाज संपूर्ण विष्व को नवीन मार्ग दिखाया है। चाहे वह सगुणधारा के संत हो या निगुणधारा के संत हो सभी ने संपूर्ण विष्व देष समाज को अपने विचारों और दार्षनिकता के माध्यम से एक नयी राह दिखाई।

कुछ महात्मा और संतों ने वेद, उपनिषद और पुराणों को न मानते हुये भी अपने विचारो को उसी का आधार बनया है। बुद्ध, कबीर और संत गंगादास आदि महात्मा ने वेद, उपनिषद के अध्ययन के बाद ही नये विचारों की धाराओ का समावेश होता है। बिना बीज के ज्ञान का पौधा नही बन सकता है। इसलिए वेद और उपनिषदों के अध्ययन के बिना नयी विचारा धारा का जन्म नही हो सकता है। वेद और उपनिषद मानव के ज्ञान की आधारा शिला है। बिना स्तम्भ के मानव के जीवन में ज्ञान का प्रकाश नही उत्पन्न हो सकता है।

महात्माओ और संतों का ज्ञान और प्रेरणा स्त्रोत प्राचीन काल की शिक्षा प्रणाली और ऋषि मुनियों द्वारा लिखले गये वेद ओर उपनिषदों के अध्ययन से प्राप्त हुआ था और होता है। इस लिये मानव को सदैव अपनी मूल्य जड़ों से जुड़ कर रहा चाहिएं।

आज संपूर्ण विश्व में बौद्ध धर्म के करीब 190 करोड़ अनुयायी है। जिनमें से चीन, जापना थाईलेंड, कंबोडिया, भारत, भूटान, नेपाल अमेरिका, श्रीलंका आदि देश आते है। बौद्ध धर्म एक दर्शन के रूप में जाना जाता है।

संजीवनी टुडे

कबीर दास

कबीर दास 15वी सदी के भारतीय रहस्यवाद, कवि और संत थे। वे हिंदी साहित्य के भक्तिकाल के निर्गुण शाखा के ज्ञानमर्गी उपशाखा के महानतम कवि है। इनकी रचनाओं ने भक्ति आंदोलन को अधिक प्रभावित किया है। दास जी की रचनाएं सिक्खों के आदि ग्रंथ में सम्मिलित है। उन्होंने समाज में व्याप्त कुरीतियों, कर्मकांड, अंधविश्वास की निंदा की और सामाजिक बुराइयों की कठोर आलोचना की। **'हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कबीर दास को मस्तमौला कहा।'**

कबीर अद्वैतवाद के समर्थन है। उनके अनुसार जीवन और ब्रह्म में कोई भेद नही है। कबीर चाहतें थे कि हिन्दू मुसलमान प्रेम एवं भाईचारे की भावना से एक साथ मिलकर रहे, उन्होंने राम रहीम की एकता स्थापित करते हुए बताया कि ईश्वर दो नही हो

सकते। यह तो लोगों का भ्रम है जो खुद को परमात्मा से अलग मानते है।

कबीर की यह मान्यता थी कि व्यक्ति समाज की इकाई है। समाज कर सप्राणता और सुगठित व्यक्ति के गुणों और आचरण पर निर्भर करती है। समाज की समरूपता तभी सम्भव है जब जाति, वर्ण, और वर्ग भेद न्यून हो। अतः कबीर की साधना वैयक्तिक और आध्यात्मिक होते हुए भी समाष्टि परक है।

कबीर ने धार्मिक सिद्धांत के साथ साथ उनके अलौकिक आचरण अथवा व्यवाहारों का वर्णन किया है उनकी साखियों का विशेष संबंध लौकिक आचरणों से है तथा पदों का संबंध विशेष कर धार्मिक सिद्धांतों तााि लौकिक आचरण से है।

कबीर स्वतंत्र प्रकृति के मनुष्य थे। उनके चारो ओर शारीरिक दासता का घेरा पड़ा हुआ था। दास की रचना में वेदांत संमत अद्वैतवाद की एक पूरी पूरी पद्धति के दर्शन किए है। दास जी का ज्ञान पोथियों से चुराई हुई सामग्री नही थी। उन्होंने स्वयं कहा **'सो ज्ञानी आप विचारै।'** दास जी बहुश्रुत थे। सत्संग से वेदांत, उपनिषदों और पौराणिक कथाओं का थोड़ा बहुत ज्ञान उनको हो गया था।

'अरू भूले षटदरसन भाई। पांषड भेष रहे लपटाई।
जैन बोध औरे साकत सैना। चावाक चतुरंग बिहूना।।
जैन जीव की सुधि न जाने। पाती तोरी देहुरै आनै।'[1]

कबीर दास समाज सुधारक नही थे। समाज रचना के लिए उन्होंने कोई सुधारवादी आंदोलन नही चलाया । दयानंद सरस्वती, राजा राम मोहन राय आदि की कोटि में उन्हें नही रखा जा सकता है। उनकी चेतना आध्यामित्क थी, वह संत थे। कर्म से साधना और सुधारक, वहन समझौतावादी थे और पलायनवादी। वह समाजिक वैष्सम्य से क्षुब्ध, दलित और शोषित वर्ग के प्रति उनमें सहानुभूति थी, कविता के लिए कविता उनका ध्येय नही था। उनक गहन अनुभूति ही अभिव्यक्ति का आधार हैं। इस लिए उनकी वाणा में समाज के विविध चित्र है। उनमें गहन सत्य ही मुखर हुआ।

कबीर संत थे। उन्हें मानवीय प्रिय था। उस समय मानवता के नाम पर जो पाखण्डवासी थे, उनसे घृणा क जाती थी । इस लिए उन्होंने अपने ससमय के सभी पाखण्ड का खंडन किया। उनके विचारों से उच्च कुल में उत्पन्न होने पर भी मानव का स्वभाव में गुण और कर्म में उच्चता नही है, तो कुल की उच्चता उसे उच्च नही बना सकती।

'बड़ा भया तो का भया, जैसे पेड़ खजूर।
पक्षी को छाया नही फल लागत अति दूर।।'

कबीर उच्चकोटि के संत के रूप में भारतीय जन मानस में अपने समय के ही अडिग आसन जमा लिया था, किन्तु कवि

के रूप उनका क्या स्थान है, इस ओर विद्वानों का ध्यान बहुत बाद में गया और जब उनके इस पक्ष पर चर्चा प्रारम्भ हुई तो कुछ लोगो ने कबीर को कवि के रूप में अस्वीकार कर दिया। 'कबीर की रचना उपदेश तो देती है लेकिन भावोन्मेष नही लाती। उनके उपदेशों को अत्यन्त ऊंचा मानकर भी साहित्य या काव्य कहने मे बहुत संकोच होता है।

कबीर सत्य के प्रेमी है। जहां सत है वही धर्म है और जहां कबीर का दिल है। उनक सुधार भावना में समन्वय क स्थिति प्रधान है। पर इतना स्पष्ट है कि वे सत और असत का समन्वय कभी न कर सके। साधना में भी भारतीय वेदांत, सूफी साधना पद्धति, बौद्ध साधना पद्धति, नाथ पंथ हठ योग साधना क्रिया आदि में काम किया है। दास जी निर्गुण निराकार ब्रह्म की लीलाओ का उल्लेख किया है वे दलित समाज सुधारक थे। इस लिए वे संत के परमदर्शन को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्राप्त करना चाहते थे।

कबीर दास ने अपने काव्य के माध्यम से समाज को नये विचार दिये–

1. दास जी का लक्ष्य समाज से बुराइयों को खत्म करना और अच्छाइयों को स्थापित करना।
2. वे लोक कल्याण के लिये दृढ़ संकल्प थे, फिर भी लोक कल्याण के मध्य गृहस्थ और वैरागी में अन्य दृष्टि से कोई भेद नही था।

3. कबीर की साधना का पूर्ण आधार प्रेम है। उन्होंने सम्प्रदायवाद, जातिवा आदि का विरोध किया ।
4. कबीर ने मूर्ति पूजा की निंदा की, उन्होने हिंदू और मुस्लिम दोनो चित्रों में पाए जाने वाले आदमबों की निंदा की, भगवान के नाम पर दोनों में टकराव होने के कारण उनकी कडी आलोचना की।
5. कबीर दृष्टि में राम और रहीम, कृष्ण ओर करीम में कोई अंतर नही था। दास जी कहते है कि यदि मानव को ब्रह्मा की सच्ची अनुभूति हो जाएगी तो सभी धर्मों का संघर्ष समाप्त हो जाएगा।

कबीर दास को पढ़ने के बाद समझ में आता है कि सर्वप्रथम स्थान मानव जाति का है। उसके बाद जातिवाद वर्णवाद आदि आते है।[2]

गोस्वामी तुलसी दास

तुलसीदास हिंदी साहित्य की दुनिया के महान कवि थे। जिनकी कविता सौ वर्षों के बाद भी जनमानस का मार्गदर्शन कर रही है। तुलसी दास का प्रसिद्ध ग्रंथ रामचरितमानस इस ग्रंथ के माध्यम से भारतीय समाज में उनका अपना एक विशेष स्थान है।

तुलसीदास ने समाज सुधारने का विशेष कार्य किया। दास जी हिंदी साहित्य में अपना विशेष योगदान ने के साथ–साथ एक

समाज सुधारक के रूप में प्रशंसनीय कार्य किया। भारत के मध्य काल में जब कुप्रथाओं ने हिंदू समाज में प्रवेश किया, तब इन प्रथाओं का विरोध दास जी ने अपनी रचनाओं में किया। इस प्रकार समाज सुधारक और हिंदू समाज की रक्षा में दास जी ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। एक महान कवि ही नही बल्कि एक सच्चे लोकनायक थे। दास जी अपनी रचनाओं से कभी किसी संप्रदाय या विश्वास का खंडन नही किया। निर्गुण और सगुण धारा की प्रशंसा भी की इस प्रकार दास जी ने भारतीय संस्कृति के संरक्षक थे। जो अपनी रचनाओं और कार्यों के लिए सदा सम्मानीय और स्मरणीय रहेंगे।

तुलसीदास के द्वारा रचित ग्रंथ श्रीरामचरितमानस के माध्यम से अपने समयकाल की व्याप्त कुरीतियों का अपनी रचनाओं उसका वर्णन किया है। अपने युग की समग्र सामाजिक, धार्मिक, दार्शनिक तथा मानवीय समस्याओं को प्रस्तुत करके उनका उचित समाधान देना। समाज की अधमता अर्थात् कलियुग के प्रतीक के माध्यम से गर्हित मूल्यों का प्रसार एवं उनसे मुक्ति के उपाय, योग, ज्ञान, कर्म, यज्ञ, आदि मूल्यों से भक्ति क तुलना और उसकी श्रेष्ठता प्रतिपादन। समाज में व्याप्त धार्मिक विवादों का निराकरण–विशेष रूप से शैव तथा वैष्णव मतावलम्बियों के मध्य एकता स्थापित करना।

तुलसी दास समन्वयवादी समाज सुधारक और दार्शनिक विचारधारा के कवि

जिस युग में दास जी का जन्म हुआ था। उस युग में धर्म समाज, राजनीति आदि क्षेत्रों में पारस्परिक विभेद और वैमनस्य का बोलबाला था। धर्म के क्षेत्र में एक ओर हिंदू–मुस्लिम तथा दूसरी शैव–शाक्त, वैष्णव मतो में आपसी ईर्ष्या–देष बढ़ता जा रहा था। हिंदू समाज अवर्ण–सवर्ण के भेद भाव में विभज्य हो रहा था। घोर अशांति का वातावरण उत्पन्न हो गया था।

भारत वर्ष की संस्कृति ऋषि और कृषि प्रधान रही है। समग्र प्राणियों में ईश्वर के दर्शन तथा भाव से संबंध बनाएं रखने के कारण ही हमारा विश्व बन्धुत्व का संदेश भी रहा है। देश धर्म और समाज जब–जब नाना प्रकार की परेशानियों में रहा तब–तब संत महात्माओं ने अपने कर्तृव्य द्वारा समाज और देश को नई दिशा दी।

–गोपाल कृष्ण पटेल

लोक नायक तुलसी दास के व्यक्तित्व में कवि एवं दार्शनिक दोनों का समन्वय है। भावना, तर्क, एवं बुद्धि की त्रिवेणी, उनकी काव्यधारा में प्रवाहित है। धर्म, दर्शन समाज में परस्पर विरोधी संस्कृतियां, साधना, जातियों, आचार निष्ठा, एवं विचार पद्धतियां प्रचलित थी। तुलसी ने अपने समन्वयात्मिकता प्रतिभा द्वारा सभी के सार तत्वों को समाहित करके मधुकर वृत्ति द्वारा सभी मनों से

मकरन्द लेकर काव्य मधु जनता को अर्पित किया। विराट समन्वय की प्रमुख धारा है।

रामचरितमानस पर तुलसी दास के समय और समाज का गहरा और व्यपाक प्रभाव था। दास जी की भारतीय जनसाधारण की समझ के कारण ही रामकथा न केवल संपूर्ण उत्तर भारत की समृति में है, बल्कि यह उसके आचार–विचार में सदियों से संस्कार की तरह शामिल भी है। जार्ज ग्रियर्सन ने तुलसी के संबंध में यह टिप्पणी सही है कि 'वे बुद्धदेव के बाद में भारत के सबसे बड़े लोक नायक थे।'

तुलसी दास सामाजिक सद्भाव और समन्वय के सेतु

नगवा के तुलसी विद्या निकेतन में राम कथा चित्रों में साकार हुई। नागर प्रचारिणी सभा में हुई परिचर्चा में तुलसी को महान कवि ही नही, भारतीय धर्म और संस्कृति का संरक्षक करार दिया गया। साहित्यकार धर्मशील चतुर्वेदी ने कहा है कि रामराज्य की परिकल्पना हमेशा के लिए आदर्श है। दास जी की रचनाओं से भारतीय समाज में शांति, सद्भाव और मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा का जो काम किया वह स्मरणीय रहेगा। डां0 अवतार पांडेय ने दास जी को समन्वय का सेतु और डां0 प्रमोद कुमार पांडेय ने हिंदू संस्कृति का रक्षक कहा। जैन मंदिर मैदागिन में 'तुलसी की भाषा' विषयक गोष्ठी में वक्ताओं ने कहा कि उनकी

रचनाओं में अवधी, ब्रज, काशिका व अन्य आंचलिक बोलियों का समावेश है। सुमेरू पीठ के स्वामी नरेन्द्रानंद सरस्वती जी महाराज ने कहा कि रामचरितमानस ज्ञान, भक्ति, वैरागय के साथ ही सदाचार की शिक्षा देने वाला ग्रंथ है। डां0 जीसी तिवारी ने कहा है कि रामचरितमानस दुनियां भर में सर्वोपकारी ग्रंथ है।

अमर उजाला

वाराणसी

तुलसी दास की समन्वय भावना – समन्वयवाद भारतीय संस्कृति की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। इस देश में समय–समय पर कितनी ही संस्कृतियों का आगमन और आविभाव हुआ, परन्तु वे घुल मिलकर एक हो गयी। महाकवि तुलसी दास ऐसे समय में अवतरित हुए, जब धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक सभी ओर उथल–पुथल और हलचल व्याप रही थी। रूढ़ियों, अंधविश्वास, बाह्माचारों आदि का बोलबाला था। संगठन और समन्वय के स्थान पर विघटनकारी को पूरा प्रोत्साहन मिल रहा था। तुलसी ने जीवन के इस विराट किन्तु अत्यंत सूक्ष्म सत्य को अनुभव किया। दास के काव्य लोक में विशेषतः 'रामचरितमानस' में हमें कवि की 'समन्वय की विराट चेष्टा' के दर्शन उपलब्ध होते है। इसी कारण तुलसी को बुद्ध के बाद भारत का दूसरा लोकनायक माना गया है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार – "लोकनायक वही हो सकता है जो समन्वय कर सके, क्योकि भारतीय समाज

नाना भांति की परस्पर विरोधीनी संस्कृतियां, साधनाएं, विचार और धर्म सिद्धांत प्रचलित रहते है। बुद्धदेव समन्वयकारी थे, गीता में समन्वय की चेष्टा की बई और तुलसी दास भी समन्वयकारी थे।"

तुलसीदास की समन्वयवादी विचारधारा

बुद्ध भगवान ने किसी नवीन धर्म का प्रतिपादन नही किया था। उनकी महिमा की आधार भूमि 'मध्यमा प्रतिपाद' समन्वय का ही मार्ग है। महात्मा बुद्ध के समान तुलसी भी लोक रक्षक धर्म का पालन करने वाले थे। 'रामचरितमानस' के रूप में तुलसी में समन्वय का आदर्श रूप प्रस्तुत किया।

पारिवारिक समन्वय – सामाजिक क्षेत्र में भी तुलसी की समन्वय भावना ही महत्वपूर्ण है। इसके अंतर्गत मानव शास्त्र और लोक समन्वय, आदर्श और यथार्थ का समन्वय, सत्य और प्रेम का समन्वय जैसी बातों को देख सकते है।

तुलसी आर्य संस्कृति के परम भक्त थे। उसकी रक्षा उनके जीवन का सर्वोच्च ध्येय था। रामचरित के द्वारा उन्होंने उसका आदर्श स्वरूप प्रस्तुत किया। जिसके सहारे हिंदू समाज आज भी बना हुआ है। मनुष्य–मनुष्य का ऐसा कोई संबंध नही जिसका आदर्श तुलसी ने स्थापित न किया हो। व्यक्ति, परिवार, समाज, राज्य तुलसी ने सब का समांस्य–विधान हिंदू संस्कृति के अनुरूप किया है।

हिंदू सभ्यता की विशेषता उत्सर्ग की भावना है। व्यक्ति को परिवार को समाज तथा समाज राज्य के लिए उत्सर्ग करना पड़ता है– यही मानव धर्म है। तुलसी ने इस उत्सर्ग का आदर्श अपने काव्य में स्थापित किया है। तुलसी ने जो अयोध्या का राज्य परिवार चित्रित किया है, उसमें आदर्श से परिपूर्ण समन्वय के दर्शन होते है। पिता–पुत्र, माता–पुत्र, पति–पत्नी, भाई–भाई, राजा–प्रजा, गुरू–शिष्य, स्वामी–सेवक के समन्वय की ओर कवि ने विभिन्न प्रसंगों में संकेत किया है।

तुलसी काव्य का प्रत्येक पात्र समाज के सम्मुख कोई न कोई आदर्श उपस्थित करता है। दशरथ सत्य प्रतिज्ञा का, राम पितृ भक्ति का, कौशल्य प्रेममयी मां का तथा सीता पतिव्रता नारी का आदर्श उपस्थित करती है। इस रूप में पारिवारिक समन्वय के द्वारा तुलसी ने एक आदर्श परिवार की कलपना की है।

डां0 श्यामसुंदर दास के अनुसार – पारिवारिक संबंधों का मधुर आदर्श तथा उत्सर्ग की भावना संपूर्ण मानस में बिखरी है।

Dr.GNJAN A. SHAH

PH.D. HINDI

तुलसी का रामचरितमानस – तुलसी ने गंगा को करूणा, सत्य प्रेम और मनुष्यता की धाराओं में वर्गीकृत किया, जिनमें अवगाहन कर कोई भी व्यक्ति अपने आचरण को गंगा की तरह पवित्र कर सकता है। उन्होंने मनुष्य के संस्कार की कथा

लिखकर रामकाव्य को संस्कृति का प्राण तत्व बना दिया । कविता का उद्देश्य लोक मंगल मानकर विपरीत परिस्थिति को तप माना। भाव भक्ति के साथ कर्म का संगम होने पर विद्या और ज्ञान स्वयं आने लगते है। तुलसी के राम सब में रमते है। वे नैतिकता, मानवता, कर्म, त्याग द्वारा लोकमंगल की स्थापना करने का प्रयास करते है।

रामचरितमानस के अतिरिक्त तुलसीदास की अन्य कृतियां जैसे कवितावली, दोहावली, पार्वती मंगल आदि है। तुलसी ने सत्य और परोपकार को सबसे बड़ा धर्म और त्याग को जीवन का मंत्र माना। मानव–तन को सही अर्थो मे मनुष्य बनाना मानवता की सार्थकता है।

भरत का त्याग, राम की करूणा, जटायू का परहित, शबरी और केवट का प्रेम, हनुमान की भक्ति, सुमति जैसे शाश्वत् लोक मूल्यों के माध्यम से उन्होंने विषम समस्याओं का समाधान किया। कर्म को सकारात्मक, भाग्य को नकरात्मक मानते हुये असत्य , पांखड, ढोग में डूबे समाज को जगाया।

आधुनिक काल में मानव ग्रंथों और वेदों का अध्ययन करने के बाद मानव को एक नई दिशा और दार्शनिक विचारों और सत्य का ज्ञान प्राप्त होता है।

रामचरितमानस व्यवहार का दपर्ण है। मानव को कैसा आचारण करना चाहिए इसका आदर्श रामचरितमानस के विभिन्न पात्र है।

'रामचरितमानस का अर्थ – राम के कर्मो की झील'

भारतीय संस्कृति में दो महान पुरूष है, जो समाज और देश का स्तम्भ है। हमारे साहित्य में कवियों के दो ही केन्द्र बिन्दु है, श्रीराम और श्रीकृष्ण इन महान पुरूषों पर अपनी रचनाओं का आधार स्तम्भ बनाया। इन कवियों ने ही समाज में आदर्श समाज की स्थापना के लिये। आदर्श नायक के रूप में प्रस्तुत किया। तुलसी, सूर, निराला, केशव आदि कवियों ने अपनी रचनाओं में नायक के रूप में समाज के समाने प्रस्तुत किया।

आज के मानव में एकता और त्याग की भावना शून्य हो गई है। आधुनिक मानव समाज के नायकों तथा आदर्शों में केवल कमियों को देखता और उन पर तर्कपूर्ण विचारों को प्रस्तुत करता है। उन से शिक्षा लेने का प्रयास नही करता है। उनके त्याग और बलिदान पर प्रश्न चिह्न लगता है।

मानव को अपने इतिहास में सदैव शिक्षा लेनी चाहिए। भारतीय संस्कृति के दो महाग्रंथ रामचरितमानस और श्रीमतभगवतगीता संपूर्ण विश्व में एकता का संदेश देती है।

भारतीय महाकाव्य पुराणों में रामायण (वाल्मीकि) रधुवंशम् (कालिदास) के बाद रामचरितमानस का नाम लिया जाता है।

"कवि ने रामचरितमानस को एक ऐसे दीपक के रूप में प्रस्तुत किया है। जो जीवन के अंधरे पथ में हमें प्रकाश दिखाता है।"[3]

1. कबीर ग्रंथावली – श्यामसुंदर दास
2. taretnotes.com
3- saskariguider.in

अध्याय–3

महात्मा गंगादास–व्यक्तित्व एवं कृतित्व

भारत देष का इतिहास गौरवमय है। इस देष में महान पुरूषो का जन्म हुआ है। जिन्होंने देष को गौरवमय बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। हमारा देष अध्यात्मिक देष है। प्राचीन काल में वेदों, उपनिषदों, पुराणों आदि की रचना की गयी है। हमारे देष के दो विषेष प्रसिद्ध ग्रन्थ है। जो सम्पूर्ण विष्व मे प्रसिद्ध है। इस ग्रन्थ का अध्ययन सम्पूर्ण विष्व में किया जाता है। रामायण और श्रीमभगवतगीता जो महाभारत का विषेष अंक है। जिसका अध्ययन देष और विदेषों में भी किया जाता है।

भारत देष में महात्माओं का जन्म हुआ है। जिन्होंने वेदों और उपनिषदों का अध्ययन के माध्यम से देष और समाज को नवीन मार्ग दिखाया। जैसे कबीर, सूर, तुलसी, रहीम आदि सन्तों का जन्म हुआ। इन्होंने अपने विचारों से लोगों को एक नवीन दृष्टिकोण दिया। इन सन्तों से समाज को एक नवीन मार्ग दर्षक किया।

संत गंगा दास इसी श्रेष्ठी के सन्त थे। जो सन् 1857 में स्वतंत्रता संग्राम के समय अपने देष को जाग्रत किया। दास जी गुलामी से मुक्त होने का मार्ग दिखाया प्रथम स्वतंत्रता संग्रमा में झांसी की रानी का उल्लेख मुख्य रूप होता है। रानी को प्रेरणा देने वाले संत गंगादास जी थे। दास जी की प्रेरणा से ही झांसी की रानी का नाम इतिहास के पन्नों में स्वर्ण अक्षरों में लिखा है। संत गंगा दास ऐसे ही संत है। जिन्होंने अपने उच्च विचारों से समाज को एक नया दार्षनिक विचार दिया और कहा कि यदि अग्रेजों की गुलामी से मुक्त होना है। तो त्याग और बलिदान करना पड़ेगा।

संत गंगा दास का जीवन परिचय – संत गंगा दास का जन्म 1880 संवत अनुरूप 14 फरवरी सन् 1823 मे मुंडेर के जाट परिवार में बसंत पंचमी को दिल्ली मुरादाबाद मार्ग स्थित बाबू छावनी के पास रसूलपुर बहलोहपुर ग्राम में हुआ था।

संत गंगादास के पिता का नाम चौधरी सुखीराम सिंह एक बड़े जमीदार थे, मां का नाम दारवा कौर था, दास जी के बचपन का नाम गंगाबख्श था। अल्पायु में ही इनके माता पिता का देहान्त हो गया था।

महात्मा गंगादास अपने समय के प्रकाण्ड पण्डित और प्रसिद्ध संत थे। उनके षिष्यों की संख्या 800 से काफी थी। भारत के सभी धार्मिक स्थलों की यात्रा करके वे अंत में गढमुक्तेष्वर जिला गाजियाबाद में रहते थे। महान दार्षनिक भावुक भक्त उदास महात्मा और एक महाकाव्य के रूप में भी इन्हे अधिक ख्याति प्राप्त हुई।

1857 की क्रान्ति – संत गंगादास उस सक्रिय थे। जब देष में 1857 की क्रान्ति का समय चल रहा था। दास जी के काव्य की खोज पहले नही हुई थी इसलिए प्रथम स्वतंत्रता से यह स्पष्ट होता है कि जन जागृति में उनका महत्वपूर्ण योगदान था। प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में जाटो का सबसे अधिक योगदान रहा है। 1857 की क्रान्ति का बिगुल मेरठ क्षेत्र से ही बजा जो संत गंगादास का कार्य स्थली है और जाट बहुल भी।

'राम बेनीवाल' ने एक घटना का वर्णन किया है। एक ऐसा समय आया था जब रानी की झांसी युद्ध में घायल होगी थी। उनकी अधिकतर सेना मारी गई थी। रानी की रक्षा के लिये लड़कियों की जो टुकड़ी उसमें 90/ जाट कन्याएं थी। रानी को जब यह ज्ञात हो गया कि अंतिम समय आ गया है और वहह अधिक समय तक जीवित नही रहेगी। तो रानी ने सभी वीरागनाओं एवं अपने बचे हुए सिपाहियों से यह वचन लिया था कि

मेरे मृत्य शरीर को गोरे नही छूयेगे। उस समय वर्षा ऋतु शुरू हो चुकी थी और अंधेरे में सूखी लकड़ियां नही मिल रही थी। वीरागनाएं रानी की लास की निगरानी कर रही थी। उसी समय जंगल में संत गंगादास जी मिले जो अपनी झोपड़ी में तपस्या कर रहे थे। वीरागनाओं ने समस्या बताई के अंग्रेज हमारे पीछा कर रहे है और हमें रानी की झांसी दाह संस्कार के लिए सूखी लकड़ियां नही मिल रही है। संत गंगादास ने कहा कि इस समस्या का हल मेरे पास है। आप रानी के शव को मेरी झोपड़ी मे लेकर चले तथा संत ने अपनी झोपड़ी को ही रानी के शव का अन्तिम संस्कार किया तथा संत ने वैदिक मंत्रों से रानी का अन्तिम संस्कार किया। जिस समय अंग्रेज सैनिक वहां पंहुचे तो रानी का शव जल कर राख बन चुका था। संत गंगादास ऐसे देष भक्त थे जिन्होंने बिना सोचे एक पल में अपनी कुटिया को रानी की चिंता के लिए त्याग दिया।

संत गंगादास का अंन्तिम समय – संत गंगादास ने (संवत् 1970) सन् 1913 भाद्र पद कृष्ण अष्टमी को प्रातः 6 बजे अपना पार्थिक शरीर त्याग दिया। संत गंगादास का स्वर्गवास 90साल की उम्र में हो गया। उनकी समाधि रसूलपुर गांव के निकट गढमुक्तेष्वर मार्ग पर चोपला में बना हुआ है।

महात्मा गंगादास ने रानी लक्ष्मीबाई को युद्ध की प्रेरणा दी

संत गंगादास 1857 के स्वाधीनता संग्रमा के समय ग्वालियर में प्रवास कर रहे थे। सारे देष में अंग्रेजों के विरूद्ध विद्रोह के झण्डे बुलन्द किये जा रहे थे। एक वर्ष पूर्व झांसी राज्य को अंग्रेजो द्वारा विष्वास घात के बल अपने कब्जे में कर लिया था। रानी को केवल 5 हजार रू.मासिक की पेंषन मिलती थी।

रानी को पता चला कि ग्वालियार में संत गंगादास नामक एक संत आये प्रवास कर रहें है, जो देष भरउ में क्रान्ति की संजीवनी प्रवाहित करते फिर रहे है। वह उनसे मिलने के लिए ग्वालियार पहुंची और उनसे मिलकर झांसी को अंग्रेजो से मुक्त कराने का रास्त पूछा। संत गंगादास ने रानी से कहा "पुत्री जिस प्रकार एक–एक धागे से वस्त्र तैयार होता है, उसी प्रकार भारत के एक–एक जन को एक सूत्र में बांधना होगा। जब तक भारत के सभी लोग एक सूत्र के नही बंधेगे, आजादी पाने का सपना पूरा नही होगा। तुम रणचण्डी बनकर अपने हाथो में तलवार लेकर उठ खड़ी हो जाओ और अंग्रेजो का सर्वनाष कर दों। तुम्हारा नाम युगो–युगो तक श्रद्धा के साथ लिया जायेगा।"

संत गंगादास ने रानी लक्ष्मीबाई को गुरू के रूप में दीक्षा प्रदान की रानी ने संत गंगादास के वचन सुनकर साहस उमड़ आया और वे अंग्रेजो से युद्ध लड़ने के लिए तैयार हो गयी।

सर यू रोज ने अपनी विषाल सेना के साथ झांसी को चारों ओर से घेर लिया और रानी को आदेष भेजा कि वह अपने सभी प्रधान सरदारो के साथ बिना हथियार उनसे आकर मिले। रानी समझ गयी कि अंग्रेजो की उन्हें गिरफ्तार करने की चाल थी। तब रानी ने निष्चिय किया कि अंग्रेजी सेना के साथ युद्ध करेगी।

"महात्मा गंगादास ने अपने 800 षिष्यों को लड़ने के लिए रानी लक्ष्मीबाई को सौपा।"

11वर्ष की अवस्था में संन्यास लिया संत गंगादास – बचपन में ही माता–पिता की मृत्यु हो जाने से गंगाबख्श को संसार से विरक्ति हो गयी और केवल 11 वर्ष की आयु में ही वे संन्यासी बनकर घर से निकल गये। उन्होनें विष्णुदास उदासीन से दीक्षा लेकर अपना नाम गंगादास रख

लिया। संत गंगादास अनेक स्थानों का भ्रमण करने के बाद काषी पहुंचे और 20 वर्षों तक काषी में रहकर उन्होंने संस्कृत विषेष कर वेदांत ग्रंथों का अध्ययन किया।

अंग्रेजी सत्ता को हटाने के लिए बने क्रान्तिकारी – संत गंगादास अंग्रेजो से बहुत घृणा करते थे। भारत को गुलामी से मुक्त करने के उपायों पर विचार किया करते थे। उन्होंने ने अपने क्रान्तिकारी काव्य के माध्यम से पूरे देष में घूम–घूम कर जनता में अंग्रेजो के विरूद्ध भावनाएं उभारने का महत्वपूर्ण कार्य करते हुये सम्पूर्ण भारत में स्वाधीनता की अलख जगायी।

संत गंगादास कालपी में प्रवास कर रहे थे। संयोग से बुरी ताह से घायल रानी किसी प्रकार उनकी कुटिया में पहुंची और उन्होंने संत जी से कहा कि बाबा मैं झांसी की रानी मैं झांसी की रक्षा नही कर सकी और यह कहते हुये उन्होंने संत गंगादास की गोद में अपने प्राण त्याग दिये। संत गंगादास ने दुखी मन से महारानी लक्ष्मीबाई का अंतिम संस्कार किया।

हिन्दी खड़ी बोली के प्रथम कवि महात्मा गंगादास का हिन्दी काव्य के साथ 1857 के साथ स्वाधीनता संग्रात में अतुलनी योगदान है, 1857 प्रथम स्वाधीनता संग्राम के महान रणनीतिक, दार्षनिक ,भावुक भक्त, उदासी संत महाकवि गंगादास। [1]

कवि संत गंगादास को डॉ0 हंस हिन्दी खड़ी बोली के साहित्य के भीष्म पितामह कहा है।

हिन्दी साहित्य को समृद्ध करने में कई आगंतुक संतो और साहित्यकारो विषेष योगदान का ही फल है, जो आज हिन्दी साहित्य

सम्पूर्ण विष्व में अपनी अलग पहचान को बना रहा है। दास जी एक ऐसे ही साहित्यकार थे। जिन्होने हिन्दी साहित्य को समृद्ध करने में अपना विषेष योगदान दिया है।

संत गंगादास ने अपने जीवन काल में 50 काव्य–ग्रंथों और स्फुट निर्गुण पदों की रचना की। इनमें से 45 काव्य ग्रंथ और लगभग 3000 स्फुट पद प्राप्त हुये। इनमे से 25 कथा काव्य और षेष मुक्तक है। ज्ञान, भक्ति और काव्य की दृष्टि से संत–कवि गंगादास का व्यक्तित्व है। परन्तु इनका हिन्दी साहित्य में इनका उल्लेख नही मिलता। कई विद्वानों ने तो इन्हें हिन्दी साहित्य में खड़ी बोली का भीष्म पितामह कहा है।

संत गंगादास द्वारा हिन्दी साहित्य दिया गया योगदान अतुलनी है। उनके द्वारा रचित काव्य चंचलता पर कई विद्वानों साहित्यकारों ने अपने मत रखे है।

अंष प्रसाद द्विवेदी के अनुसार – हिन्दी साहित्य के इतिहास में एक महत्वपूर्ण भूमिका के अतिरिक्त संत–काव्य की सौन्दर्य दृष्टि और कला पर संत दास जी काव्य सुन्दर प्रकाष स्थान है।

डां0 राम कुमार वर्मा – ज्ञान भक्ति और काव्य की दृष्टि से संत कवि गंगादास विषेष प्रतिभावान है, लेकिन उनकी काव्य भूल होने के कारण हिन्दी साहित्य के इतिहास में संत दास जी का उल्लेख नही हो सका।

डां0 गोपीनाथ तिवारी – जब भारतेंदु और ग्रियर्सन प्रभृति विद्वान बोली को हिन्दी काव्य रचना के लिए अनुपयुक्त मान रहे थे। तो पहले केवल संत गंगादास कई सुन्दर छंदों वृत्रों द्वारा बोली के कला पूर्ण और सुन्दर काव्य की कई रचनाओं को प्रस्तुत कर रहे थे।

संत गंगादास के काव्य में मानव संवेदना, जीवन दर्षन, भक्ति भाव आदि की प्रधानता रही है। उन्होने हिन्दी साहित्य जो योगदान दिया है, वह अतुलनी और अनुठा है।

हिन्दी साहित्य में योगदान – बोली हिन्दी के गढ़ मेरठ जनपद की साहित्यकार के इतिहास में वही स्थान है, जो भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में मेरठ से अद्भूत सन् 1857 की क्रान्ति का है। राष्ट्र भाषा हिन्दी के साथ एवं विकास में मेरठ के साहित्यकारों के नाम कम महानता नही है। भारत में जब राष्ट्रीयता का नवजागरण हो रहा था। तक बोली हिन्दी के माध्यम से मेरठ जनपद के बोलने अपनी भावनाओं का प्रकटीकरण करके देष को एक नई दिषा दी थी।

संत गंगादास भी एक ऐसे ही विभूति थे, जो शैषव काल में ही अपने माता–पिता का देहावास हो जाने के कारण महात्मा विष्णुदास उदासीनता से दीक्षा लेकर गंगाबख्स से गंगादास बन गये थे। इस महाकवि ने लगभग 50 काव्य ग्रंथ और कई स्फुट निर्गुण पदों की रचना करके भारतेन्दु काव्य क्षेत्र में पदार्पण करने के पूर्व ही खड़ी बोली को जो स्वरूप प्रदान किया, वही बाद में विकसित होकर काव्य का वक्र बना।

संत गंगादास खड़ी बोली के आदि कवि आधुनिक काव्य के प्रेरणा स्त्रोत और कुरू प्रदेष के गौरव है। कबीर का फक्कड़पन, सूर की भक्ति, तुलसी का समन्वय, केषव की छंद योजना और बिहारी की कला एक ही स्थान पर देखनी हो तो संत दास का काव्य का नाम उदाहरण है।

महाकवि संत गंगादास ने 25 कथा काव्यों और कई सहस्त्र निर्गुण पदों की रचना की थी। जो हिन्दी साहित्य के लिए दी गई। उनकी प्रमुख कथा में लिखा है – पार्वती मंगल, नल दमयंती, नरसी भक्त, ध्रुव भक्त, कृष्ण जन्म, नल पुराण, रामकथा, नागलीला, सुदामा चरित्र, द्रोपदी चीर,

हरिचन्द्र के पद, ग्राहिराज पूजा, होली पूर्णमल, भ्रमर गीत मंजरी आदि प्रमुख है।

हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में हुये नये शोधों ने भारतेन्दु हरिष्चन्द्र को खडी़ बोली का प्रथम कवि माने जाने पर प्रष्न चिन्ह अंकित कर दिया।

हिन्दी साहित्य जगत के इतिहास में खड़ी बोली के प्रथम कवि के रूप में संत गंगादास को मान्यता दी जानी चाहिए। महाकवि संत दास का जन्म 1823 मे और भारतेन्दु से पहले हुआ था।

महाकवि गंगादास स्थित मणि पर गंगा समय की धूल को दावा करने का पुण्य कार्य दिल्ली के डां0 जगन्नाथ शर्मा 'हंस' ने किया। उन्होने 770 में "महाकवि गंगादास व्यक्तित्व और कृतित्व" विषय पर शोध ग्रंथ लिखा। 'अखिल भारतीय गंगादास हिन्दी संस्थान' के माध्यम से गंगादास पर खोज साहित्य प्रकाषन एंव जन जागृति का कार्य करवा रहे।

संत गंगादास हिन्दी साहित्य में अधिक प्रषंसा है, उनके साहित्य में लोकोक्ति, मुहावारे जन जीवन के सांस्कृतिक तत्व आदि सभी सम्यक रूप से समाहित है, उनकी अनिष्चित भाषा के गुण सभी अन्तर्निहि है। निर्गुण पदों को उनको पाठ्यक्रम में शामिल किया जा सकता है। इसमें पिंगल, पिराग, गुरूकृपा, माया, आषा, अंहकार, वियोग, उलटवासी, प्रकृति और पुरूष आत्मा और परमात्मा, योग, और साधना आदि जैसे गहन और ईष्वरीय विषयों को स्थानीय सहज भाषा में वर्णित किया गया है।

आचार्य हजारी प्रासद द्विवेदी – हिन्दी साहित्य के इतिहास में एक महत्वणूर्ण भूमिका के अतिरक्ति संत काव्य की सौन्दर्य दृष्टि और कला पर संत गंगादास का काव्य सुन्दर प्रकाष डालता है।

कवित –

झूलत कदम तरे मदन गोपाल लाल ,

बाल है विषाल झुकी झोकनि झुलावती।(1)

कुण्डलियां –

माया मेरे हरी की, भगवान।

भगवत जगत में जो फंसे, भगवान ।।

करें बरी भगवान, भाग से भगवत अपने।

इसे दीनदयाल हरी – हर चाहियें अपने।।

गंगादास परकास भया मोह – तिमिर मिटाया।

संत भए आनंद ज्ञान से तर गए माया।। (2) [2]

स्वतंत्रता सेनानी, महाकवि संत गंगादास – महान ईष्वरवादी भावुक भक्त उदास, महात्मा महाकवि गंगादास का जन्म दिल्ली मुरादाबाद मार्ग पर स्थित बाबूगढ़ छावनी के निकट रसूल ग्राम में हुआ था। पिता चौधरी सुखीराम मुंडेर गोत्र के जाट और जमीदार थे। माता का नाम दारवा था। जो हरियाणा में बल्लभगढ के पास दयालपुर की रहने वाली थी।

संत गंगादास ने काषी में 20 वर्षों तक रोमिंग वेदांत, व्याकरण, गीता, महाभारत, रामायण, रामचात्रिमानस, अद्वैत, कौस्तुम मुक्तावली आदि ईष्वरीय ग्रंथों का गहन अध्ययन किया। संत जी ने मुरादाबाद, उत्तर प्रदेष, हरियाणा, पंजाब, दिल्ली और राजस्थान में भ्रमण किया था।

हरियाणा के सर्वश्रेष्ठ लोक कवि एवं लोक नाट्यकार पंडित लखमीचन्द्र के गुरू पंडित मानसिंह तथा मान सिंह के गुरू मवासी नाथ के गुरू संत गंगादास थे। इस प्रकार पंडित लखमीचन्द्र भी संत गंगादास

की षिष्य परंपरा में थे। अपने निवास के समय संत गंगादास ने झांसी की रानी लक्ष्मीबाई और उनकी सखी मुंदर की दीक्षा देकर उनकी राष्ट्रीयता का पाठ पढ़ाया तथा भारत को स्वतंत्र स्थिति से युद्ध करने और भारत को स्वतंत्र स्थिति संतो की एक सेना की एक सेना भी संत ने बनाया था।

"लोकमान्य तिलक के समान गंगादास में भी राष्ट्रीयता और अध्यात्म की दोनो धाराएं समांतर रूप से चल रही थी।"

हिन्दी साहित्य में ब्रिटिष शासन के खिलाप राष्ट्रप्रेम और स्वतंत्रता का सर्वप्रथम बिगुल उल्लेखनीय संत गंगाादास (1823–1913) काव्य ज्ञान भक्ति और राष्ट्रप्रेम की त्रिवेणी है। बोली क्षेत्र या कुरू प्रदेष की संस्कृति का सजीव चित्रण उनके काव्य में कलात्मक रूप से उपलब्ध है। आधुनिक काल में संत गंगादास का महत्व और अलग स्वीकार करते है।

नीतिहान राजा अन्याई वेद प्रतिपक्षी शठ दुःख आदि गंगादास के कथन सिद्ध करते है कि राजा और प्रजा दोनो के लिये नैतिक वचन का पालन वह आवष्यक मानते है। अपने दायित्व कार्यों की ओर ध्यान आकर्षित करके नैतिकता की आवष्यकता पर भी बल दिया। राजनीति का वर्णन करते हुए उन्होने रामराज्य के आदर्ष और रावण राज्य के पदानुक्रम कार्यों का चित्रण प्रस्तुत किया। **'भूप दंड नही देते, भाई पाप की मेजर'** आदि के विभिन्न अंग्रेजो के कुषासन की ओर ध्यान आकृष्ट किया। राजा के लिए दया, धर्म, विद्वानों का सम्मान, पापियों को दंड आदि।

"ज्ञान, भक्ति और काव्य की दृष्टि से संत कवि गंगादास विषेष प्रतिभावान है, लेकिन उनका काव्य न होने के कारण हिन्दी साहित्य के इतिहास में उल्लेख नही हो सका था। डां0 जगन्नाथ शर्मा ने अत्यंत मानोयोग से इस कवि की रचनाओं की खोज की और सुंदर समालोचना प्रेजेंटेषन बनाकर एक महत्वपूर्ण खोज कार्य किया"। डां0 राम कुमार संत

गंगादास का काव्य भारतेन्दु पूर्व खड़ी बोली हिन्दी का सुप्रीम निदेश है और हिन्दी साहित्य के इतिहास की कई पुरानी विरासत के परिवर्तन का स्पष्ट उद्घोष भी करता है।

संत गंगादास की मुख्य कृतियां – महाकवि संत गंगादास की हस्तलिखित पांडुलिपि पूर्ण भक्त, नरसी भक्त, ध्रुव भक्त, निर्गुण पदावली, कृष्णजन्म, श्रवण कुमार, नल पुराण, राम कथा, कन्याएं, बारह अंक आदि।

डां0 लक्ष्मण स्वरूप षर्मा – षिक्षा विभाग हिन्दी दिल्ली लिख रहे है कि भारतेन्दु पूर्व खड़ी बोली हिन्दी काव्य का सुप्रीम निदर्शन ही गंगादास काव्य है। जब ग्रियर्सन, भारतेन्दु आदि कई साहित्यकार खड़ी बोली हिन्दी काव्य रचना की असम्भावना का उद्घोष कर रहे थे। उससे भी पहले गंगादास खडी़ बोली के ललित और काव्योपयोगी स्वरूप का निर्माण करके इतनी काव्य की रचना कर चुके थे। इस कवि की जीवनी से यह स्पष्ट हो जाता है कि जाट के जीवन किसी भी क्षेत्र में पीछे नही रहे। युद्ध, खेती, षिक्षा, त्याग बलिदान सब में अगुणी है।

बराह रूप के दरष हो निषि बासर मोहि जान।

गंगादास है, नाम मम तुम से कहूं बखना।।

महारानी लक्ष्मीबाई के दीक्षा गुरू–संत गंगादास का इतिहास कवि – राणा भूपेन्द्र सिंह

'18 जून महारानी लक्ष्मीबाई के बलिदान दिवस के रूप में जाना जाता है।' संत गंगादास वैसे तो किसी परिचय के मोहताज नही पर आज की नयी पीढी को उनका इतिहास पढना जरूरी है।

1. त्याग संत महापुरूष महान स्वतंत्रता संग्रमा सेनानी हिन्दी के पितामह।

2. गंगादास धार्मिक विचारों के थे।
3. संत जी बुद्धिमता देखकर बुलंदशहर की कुटी के संत विष्णु दास उदासीन ने उन्हें अपना षिष्य बना लिया था।
4. 1857 की क्रान्ति में अग्रदूत रहे। संत गंगादास अपनी मातृभूमि से बहुत प्रेम करते थे। वह अंग्रेजी की दास्तां से मातृभूमि को मुक्त कराना चाहते थे।
5. संत गंगादास महारानी झांसी के पिता के गुरू थे। लक्ष्मीबाई ने भी इनसे दीक्षा ली युद्ध कौषल सीखा गंगादास जी बहुत से क्रान्तिकारी गुप्त रूप से ग्वालियर मिलने आते थे।
6. गंगादास जी और झांसी की रानी ने स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये घोड़े पर साथ–साथ घूम–घूमकर लोगो को जागृत करते थे तथा रानी का सदैव मार्गदर्षन करते थे।
7. ग्वालियर में स्वर्ण रेखा के पास बने समाधि स्थ्ल के बगल से ही संत गंगादास का बगीचा है।
8. झांसी की रानी के स्वराज्य पर हमेषा ही बात होती है, लेकिन कम ही लोग जानते है कि इस भावना के पीछे कौन था। झांसी की रानी ने एक बार साधु से स्वराज्य की स्थापना के बारे में पूछा था, तब उन्हें उत्तर मिला, सेवा, बलिदान और तपस्या से स्वराज्य क स्थापना हो सकती है। बाद में रानी इसी रहा पर चली, उन्हें य पथ दिखाने वाले संत गंगादास थे।
9. गंगादास अपने गुरू के आदेष पर वे काषी आ गये। यहां लगभग 20 वर्ष उन्होने संस्कृत के अध्ययन और साधना में व्यतीत किये। उन दिनों देष मे सब ओर स्वाधीनता संग्रमा की आग धधक रही थी। दास जी इससे प्रभावित होकर ग्वालियार चले गये और वहां एक कुटिया बना ली। वहां गुप्त रूप से अनेक क्रान्तिकारी उनसे मिलने तथा परामर्ष के लिए आने लगे।

10. संत गंगादास जीवन भर निकटवर्ती गांवों में घूमकर ज्ञान, भक्ति और राष्ट्रप्रेम की अलख जलाते रहे। दास जी ने लगभग 50 से भी अधिक पुस्तके लिखी। उन्होने अपने काव्य में खड़ी बोली का प्रयोग किया है और संत कबीर दास की तरह समाज में व्याप्त कुरीतियों और अंधविष्वासों पर कठोर प्रहार किया।

ऐतिहासिक नाटक के लेखक श्री वृन्दावन लाल वर्मा ने अपने नाटक झांसी की रानी में लिखा है कि रानी लक्ष्मीबाई अपनी सखी मुन्दर के साथ गुप्त रूप से बाबा की कुटिया में आती थी। आगे चलकर जब रानी का युद्ध में प्राणांत हुआ, तो विदेषी व विधर्मियों के स्पर्ष से बचाने के लिए उनके शरीर को बाबा ने अपनी कुटिया में ले आये इसके वाद दास जी अपनी कुटिया को आग लगाकर रानी का दाह संस्कार कर दिया। [3]

'बिखरे मोती' नाम पुस्तक के लेखक तेजपाल सिंह

खड़ी बोली के प्रथम समर्थ कवि गंगादास का अवतरण भारत भूमि तथा सम्पूर्ण हिन्दी जगत के लिये परम पिता परमात्मा की मानव जाति के लिए एक अद्वितीय भेट है। इस युग में उन्होने जन्म लेकर जीवन भर ब्रह्मचर्य का पालन किया। धर्म एवं समाज में भ्रष्टाचार व कुरूतियों पर कठोर व्यंग्य कर वे संत कबीर के परवर्ती आसन पर पदासीन होने के योग्य थे। इनका नाम महाभारत ग्रंथ की रचना करने के कारण महर्षि वेद व्यास के तत्काल बाद लिखे जाने के योग्य था। गंगादास की रचना उन्हें सूरदास के समकक्ष बनाने की योग्यता रखता है। इनके मुख निकला एक वाक्य ही नही अपितु एक–एक शब्द लिपिबद्ध करने तथा पूरे जगत कल्याणार्थ प्रचार प्रसार करने योग्य है। इस महामानव ने धर्म दर्षन काव्य ग्रंथों की रचना तथा देष भक्ति का मार्ग सुझाकर मनुष्य जाति पर मान उपकार किया है। उन्होने दर्षन एवं भारतीय लोक संस्कृति का गौरवपूर्ण व्याख्यान पर देशवासियों में भय एवं निराषा की भावना को काव्यों को

लिख तथा शक्ति प्रदर्षन कर दूर किया एवं स्वाभिमान आत्मबल सयंम आस्था कर्तव्यनिष्ठा का संचार किया। एक बार तो ऐसा लगने लगा कि ब्रिटिष हुकूमत का परचम अब सदा–सदा के लिए भारत से विलुप्त हो जायेगा।

संत गंगादास का वैराग्य – संत गंगादास का अभी शैषव काल भी पूरा नही हुआ था कि इनके माता–पिता दोनो ने इस संसार को अलविदा कर दिया। अपने परिवार जनो के साथ खेती–बाड़ी करते हुये एक दिन उनके कपड़ों पर मिट्टी लग जाने से बालक का मन खिन्न हुआ। उसके मनो स्थल पर तरंगे उठने लगी और वैराग्य उत्पन्न हुआ क्योंकि देवी शक्ति साक्षात्कार ओख झपक के समान क्षण भर के लिए होता है। रहस्य और वैराग्य के कारण वर्ष की आयु में सत्य की खोज में यह बालक घर से निकल पड़ा उस बालक ने विष्णु दास उदासीन से जो सैदयपुर जनपद बुलंदषहर में ध्यान और योग मे लीन थे। दीक्षा ग्रहण की तथा पूर्व नाम गंगाबख्श से गंगादास नामक संन्यासी हो गये। विष्णुदास उदासी मत के अनुयायी थे। संत गंगादास उदासीन सम्प्रदाय के गुरू प्रणाली में इसके प्रवर्तक श्री चन्द्राचार्य से आगे बारहवे स्थान पर आते है।

उदासीन अतीत वैदिक काल से यह निर्बाध गति से चला आ रहा है। श्री चन्द्राचार्या इसके व्यवस्थापक थे। उन्होंने उदासी सम्प्रदाय को नवीन जीवन दिया तथा वेदान्त के अद्वैतवाद के सिद्धान्तों का पालन किया।

संत गंगादास की षिक्षा – संस्कृत और हिन्दी की प्रारम्भिक षिक्षा अपने गुरू विष्णु दास से प्राप्त की अद्भूत मेधा वाले इस बालक ने सभी धार्मिक सिद्धान्तों और संस्कृत को बहुत शीघ्र ही ग्रहण कर लिया। षिक्षा इनकी विषमकारी रूचि देखकर गुरूजी ने इन्हे उच्च षिक्षा के लिए

वाराणासी भेज दिया। 20 वर्ष तक उन्होने संस्कृत के अनेक धर्म ग्रंथों का अध्ययन कर लिया था। [4]

महान देष भक्त खड़ी बोली के प्रथम कवि संत गंगादास –

संत गंगादास खड़ी बोली में विषाल साहित्य की रचना की है। उनकी रचित विषद् साहित्य के आधार पर ही उनकी हिन्दी खड़ी बोली का प्रथम कवि, आदि कवि या खड़ी बोली का पितामह संत गंगादास को कहा जाता है। दास जी उच्च कोटि के देषभक्त होने के साथ उच्च कोटि के कवि भी थे। उनके व्यक्तित्व और उनके साहित्य पर दिल्ली शाहदरा निवासी डां0 हंस ने अपनी खोज ग्रंथ महाकवि गंगादास व्यक्तित्व एवं कृतित्व में उनके जीवन के हर तरफ विस्तृत एवं कृतित्व में उनके जीवन के प्रत्येक पहलू पर विस्तृत प्रकाष डाला है। उन्होने अपने ग्रंथ में सिद्ध किया है कि खड़ी बोली के पहले कवि भारतेन्दु नही, अपितु संत गंगादास है। श्री हंस के अनुसार जिस समय भारतेंदु का जन्म हुआ था, उस समय तक दास जी हिन्दी साहित्य जगत को खडी बोली में सहस्त्रों पद दे चुके थे।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के जन्म से पहले खड़ी बोली में सहस्त्रों पदपत्र लिखते थे –संत गंगादास – विख्यात साहित्यकार डां0 गोपीनाथ तिवारी का कथन है कि दास जी ने उस समय पूर्व ही खड़ी बोली में काव्य सृजन कर दिया था, जब हिन्दी के कई मूर्धन्य साहित्यकार जैसे ग्रियर्सन, प्रताप नारायण मिश्र व भारतेंदु आदि यह घोषण कर चुके थे कि खड़ी बोली में रचना असम्भव है।

मुझे खड़ी बोली पद्य और इस पर आपकी राय के लिए आपका पत्र प्राप्त हुआ है। मुझे खेद है कि मेरी आलोचना नही हो सकती क्योकि मेरी राय है कि खड़ी बोली मे कविता लिखने के सभी प्रयास असफल

हुये। इस मामले पर कुछ साल पहले बनारस के बाबू हरिष्चन्द्र ने मुझसे पूरी तरह से चर्चा की थी। उनके तर्कों को कायल मानते है – **ग्रियर्सन**

डां0 शर्मा के इस खोज ग्रंथ को पढ़कर मूर्धन्य साहित्यकार डां0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस ग्रंथ के सम्बन्ध में लिखा – डां0 हंस का शोध प्रबन्ध शोध विषय और अनुसंधान कार्य प्रणाली की दृष्टि से एक उपयोगी कृति है। जो हिन्दी साहित्य के इतिहास में बोली का महात्वपूर्ण भूमिका के अतिरिक्त संत काव्य की सुंदर दृष्टि और कला पर संत गंगादास काव्य सौंदर्य प्रकाष डालता है।

ग्रामीण लोकोक्तियों और मुहावरों से जुडता है–महात्मा संत गंगादास काव्य – संत गंगादास के काव्य में लोकोक्तियों मुहावरों व अन्य तत्वों का ऐसा सौंदर्यमय समावेष हुआ है, जो कि कामायनी जैसी उत्कृष्ट रचना की भाषा में भी अलभ्य है। संत दास की भाषा में कुरू प्रदेषिक माटी की भीनी–भीनी गंध और यहां की सुंदर संस्कृति का समावेष है, यहां के लोक जीवन की रूपरेखा में रूपक हो सकते है। संत दास जी ने ज्ञान–भक्ति, निराकार–साकार साधना का सुन्दर समन्वय किया है।

सरस्वती के वरद पुत्र संत गंगादास एक ओर अपने समय के महान देष भक्त, क्रान्तिकारी थे, तो दूसरी ओर वे एक गुप्त कवि थे। संत गंगादास के खड़ी बोली रचित साहित्य ने उनको हिन्दी साहिय जगत में सदा सदा के लिए अमर कर दिया है। हिन्दी के समस्त साहित्य में उनके समान कोई और अंष, संत, कवि नही मिलते है। जो उत्कृष्ट काव्य के साथ–साथ स्वाधीनता के लिए भी अलख जगायी। जाट समाज को संत गंगादास पर गर्व है।

महाकवि गंगादास रचित मुख्य प्रकाषित पुस्तके – सुदामा चरित्र, अंगद रावण संवाद, भरत मिलप, बह्मज्ञान चिन्तामणि आदि।

आचार्य क्षेमचन्द्र 'सुमन'– खड़ी बोली हिन्दी के गढ़ मेरठ जनपद की साहित्यक चेतना का हिन्दी साहित्य के इतिहास में वही स्थान है जो भारतीय स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में यहां के अद्भूत 1857 की क्रान्ति का था। यदि हम यह के तो कोई अतिषयोक्ति न होगीकि जिस प्रकार भारत की स्वाधीनता के द्वारा मेरठ की बलिदानी भावना से उद्घाटित हुआ। उसी प्रकार राष्ट्रभाषा हिन्दी के उन्नयन तथा विकास में भी यहां के साहित्यकारों की देन कम महत्वपूर्ण नही।

संत गंगादास मूलतः संत प्रकृति के भक्त कवि थे। उन्होने अपनी आध्यात्मिक भावनाओं का प्रकटीकरण जिस भाषा मे किया है, वह भारतेंदु के साहित्यिक क्षेत्र में अवतीति होने से पहले ही लिखी गयी थी।

संजम का कर थाल लिया है।
ज्ञान का दीपक बाल लिया है।
तप–घंटा तत्काल लिया है।
धूप करी निष्काम की,
मनै अनहद शंख बजाया।
पूजा करके आत्माराम की,
मनै परमेष्वर पति पाया।

खड़ी बोली का ऐसा उदात्त रूप तो हमें भारतेंदु के काव्य में भी दृष्टिगत नही होता है। यही नही कि उन्होने आध्यात्मिक रचनाएं ही की थी, प्रत्युत समाजिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों का सम्यक दिग्दर्षन भी उनकी अंधिकांष कृतियों में मिलता है।

डां0 रमेषचन्द्र मिश्र – मेरठ जनपद के प्रिय कवि संत गंगादास ने बडी ललित खड़ी बोली पर काव्य, पुस्तके लिखी है, और खड़ी बोली, जिनके पद शैली के लिए पूर्णतः अनुपयुक्त माना जाता था भारतेंदु की दृष्टि में तो खड़ी बोली के कविता हो ही नही सकती थी, उसी खड़ी

बोली में बड़े–बड़े मार्मिक व्यंजक और ललित पदों की रचना दास जी ने अग्रेजो के शासन की भी खुली आलोचना की है, और इन्होंने भारतेंदु से लगभग 20–25 वर्ष पूर्व ही राष्ट्रीय चेतना का प्रर्वतन किया था। इनकी रचना ज्ञानमाला, कुण्डलियां, छनद में है, जो सन् 1850 की रचना है।

इनके द्वारा प्रयुक्त चेतना की।
चारो के इस वक्त पर, करत रहे तप,
भूप दण्ड देते नही, भई पाय की रेज।
भई पाय की रेज, कचैड़ी लोभी जरनो।
नीति तज गई देख आप अय सबै लगााने,
गंगादास कहे मुख काले रिष्वतखोरो के।
हाकम लोभी थरे बरी दाबे चारा के।।

डां0 चन्द्र पाल षर्मा – बहुआयामी प्रतिभा के धनी संत गंगादास खड़ी के पहले कवि माने जाते है, लेकिन दुर्भाग्य से उन्हें हिन्दी साहित्य में व स्थान नही मिला, जिसके वे अधिकारी थे। उनका काव्य अनूठा माना जाता है, अब कुछ साहित्यकारों ने उन पर शोध करना शुरू किया है।

जे लोग अपने पूर्वजो को भूल जाते है। उनका अतीत धूमिल हो जाता है, कभी मेरठ जनपद का भाग रहे रसलपुर बलोलपुर में 1823 ई. में जन्मे गंगाबख्श (संत गंगादास) भी अपनी मृत्यु के लगभग 75–80 वर्ष तक साहित्य –समाज मे अपरिचित ही रहे, दास जी को साहित्य जगत में स्थापित करने का कार्य मेरठ के दो सपूतो क्षेमचन्द्र 'सुमन' और डां0 जगन्नाथ शर्मा 'हंस' ने किया, सुमन ने मेरठ से प्रकाषित पत्रिका 'साहित्यिक चेनता' में संत गंगादास का सर्वप्रथम लेख लिखा और फिर अपने अनुपम ग्रंथ दिवंगत हिंदी सेवा में उन महत्वपूर्ण सामग्री दी। हंस ने 1970 ई में दास जी के काव्य पर प्रथम शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया, फिर तो

हंस जी के निर्देषन मे 16 शोधियों ने दास जी के साहित्य पर अपने–अपने शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किये। दुःख की बात है कि हिन्दी के इतिहास लेखकों ने संत गंगादास का उल्लेख तक नही किया।

हमारी संस्कृति में गुरू का बहुत महत्व है। गुरू को बह्मा, विष्णु , महेष के समकक्ष मानते है। कबीर तो ईष्वर से पहले गुरू को स्थान देते है।

गुरू गोविंद दोऊ खड़े काके लागू पाय।
बलिहारी गुरू आपनों, जिन गोविंद दियो बताय।।

'आचार्य देवोभवः' को मानने वाले संत गंगादास भी गुरू को महा मोह के सिंध से पार लगाने वाला मानते है।

1. **बिन सतगुरू को पार लगैया।**
ना नैया मिले खिवैया।।
2. **सब जगत काल का चारा।**

कवि का भाव – पक्ष क्षेत्र बहुत विस्तृत है। उसने सभी रसों पर लेखनी चलाई है। भाषा कही संस्कृतनिष्ठ है, तो कही एकदम बोल चाल की है। कवि खड़ी बोली के सर्वश्रेष्ठ कवि है, किन्तु उसमें हरियाणवी व पंजाबी के पूट को भी देखा जा सकता है। कही–कही ठेठ देषज शब्दों का प्रयोग है। षब्द निर्माण की क्षमता भी है। वह सुहागन की तर्ज पर विलोम के रूप में दुहागन का प्रयोग हुआ है। अनेक अंलकार देखे जा सकते है। अभिधा में कहने के साथ लक्षणा–व्यंजना का भी खुलकर प्रयोग हुआ है। छंद प्रयोग में तो वह केषव दास के वंषज मालूम पडते है। कुल मिलाकर यह का सकता है कि खड़ी बोली के इस कवि के काव्य में

प्रौढता है और विविध विषयों का सविस्तार वर्णन किया है। अतः इस कवि को उसका उचित स्थान मिलना चाहिएं।

नीति ही राजा अन्याई।
वेद विरोधी सठ दुखदाई।
पंथ चले अब तौल ना पाइ।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा, "हिन्दी साहित्य के इतिहास में महत्वपूर्ण भूमिका के अतिरिक्त सेत काव्य की सौंदर्य दृष्टि और कला पर दास जी का काव्य सुंदर प्रकाष डालता है।"

डां0 विजयेन्द्र स्नातक – संत कवि गंगादास का काव्य भारतेंदु पूर्व खड़ी बोली हिंदी काव्य का उच्चतम निदर्षन है और हिंदी साहित्य के इतिहास की अनेक मान्यताओं के परिवर्तन का उद्घोष भी करता है। पद्मश्री सुमन लिखते है, कि संत गंगादास खड़ी बोली के पितामह, आधुनिक काव्य के प्रेरणा स्त्रोत और कुरूप्रदेष के गौरव है।

संत गंगादास के काव्य मे भक्ति दर्षन, वैराग्य, गुरू महिमा, रहस्यवाद, लोक साहित्य, समाज सुधार, नीति आदि के विविध रूपों का विस्तार से वर्णन है।

महाकवि संत गंगादास का छंद शास्त्र – संत दास जी छंद शास्त्र के निष्णात और काव्य शास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित थें। हरि गुण गायन हेतु भी छंद की आवष्यकता पर बल देते हुये वे कहते है कि – "छंद से हरिगुन गााना चाहिएं, आगम की मर्याद से मुनि जो मर्याद धर गये"। इसीलिये इनके काव्य में 23 प्रकार के मात्रिक छंदों और 13 प्रकार के वर्णित वत्तों का सफल और शुद्ध प्रयोग मिलता है।

मात्रिक छंदो में तोमर, लीला, सखी, गोपी, चौपाई, सिंह, दोह, सोरठा, कुण्लियां, हरिगीतिका, लावनी, ताटक, कुकुभ और शेखर आदि का प्रयोग मिलता है।

वर्णिक वृत्तों मे विद्युन्माला, मणिबन्ध, मोटनक, वसुधा, दुर्मिल सारंगी, भुजंगप्रयाति, कवित्त एवं जलहरण आदि का प्रयोग है। 'पूरनभक्त' कथा काव्य में पदे–पदे छंद परिवर्तन करने की 'रामचंद्रिका' की केषवदासी प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है। इस कवि ने छन्दों का प्रयोग अधिकार के साथ किया है।

करन कि बानी सारंग पानी,
मन मे जानी, आप हरी।
सुन अब पारथ, कर निज स्वारथ,
नही अकारथ, फोज मरी।।
वीर हमारो, कहा विचारो,
अब सर मारो, देर तजो,
सोचपरन कू दुःख हरन कू ,
मार करन कू , दुःख हरन कू ,
मार करन कू , तीर सजो।।

कबीर दास और संत गंगादास के विचारों का अध्ययन

कबीर दास भक्तिकाल के कवि थे, संत गंगादस स्वतंत्रता सेनानी, संत, कवि थे। कबीर दास संत, कवि, और समाज सुधारक थे। कबीर दास अपने समय में व्याप्त कुरीतियों के विरूद्ध क्रान्ति कर रहे थे और संत गंगादास देष में आये विदेषी शक्ति के विरूद्ध क्रान्ति की मषाल जलाये थे। दोनो संत क्रान्तिकारी प्रवृत्तियों के थे। दोनों संत समाज सुधारक, कवि और संत थे। अपने–अपने समय में दोनो संतों ने देष और समाज

को नवीन दृष्टिकोण दिया। अपने पदो के माध्यम से समान्य जन के मध्य क्रान्ति का बीच बोया, तथा मानव जाति के विचारों में परिवर्तन लाने का प्रयास किया। संत समाज का मूल्य कार्य समााज को अपने शास्त्रों का ज्ञान समान्य जन के मध्य उसका प्रचार प्रसार करना चाहिएं।

संत गंगादास ऐसे क्रान्तिकारी थे, जो देष को अंग्रेजो की गुलामी से मुक्त करने के लिए अपने पदो के माध्यम से लोगो को जागरूक करते थे। दास जी के पद खड़ी बोली में लिखे हुये है।

कबीर दास अपने पदो के माध्यम से समाज और देष में व्याप्त जातिवाद, भेद–भाव का घोर विरोध किया। कबीर दास और गंगादास निगुर्ण भक्ति, गुरू की महिमा का गान करना और निराकार ईष्वर की उपासना आदि।

भारतीय संस्कृति गुरू और षिष्य का सम्बन्ध अनमोल है। गुरू के माध्यम से ही ज्ञान प्राप्त करते है क्योंकि गुरू के बिना षिष्य अधुरा है। गुरू ही शिष्य को एक नई दिषा देता है और सत्य से अवगत करता है। गुरू ही है जो अपने षिष्य के गुणो और अगुणों को पहचनता है। गुरू की दृष्टि के उनके सभी षिष्य समान्य होते है।

'षिष्य का सबसे बड़ा आदर्ष एकलव्य है। जिन्होंने गुरू की आज्ञा देने पर अपने हाथ का अगुठा काट कर गुरू के चरणों में रख दिया था। एकलव्य ने गुरू दोणाचार्य की मूर्ति बनाकर उन्हे अपना गुरू माना था और एक पल बिना सोचे एकलव्य ने अपना अगुठा काट दिया।'

प्राचीन काल हो या आधुनिक काल हो दो के विकास और प्रगति के लिए समय–समय पर महात्माओं का जन्म होता रहता है। यह विचारक हमारे और आप जैसे ही व्यक्ति होते है लेकिन उनमें ज्ञान की शक्ति होती है कि वह अपने विचारों को समाज और देश के समाने अपने विचार व्यक्त करते है और जिसका अनुसरण देष और समाज के हित के लिए होता है।

एक आम व्यक्ति ही देष को नयी दिषा दिखाता है क्योंकि बिना अध्ययन के कुछ भी नही हो सकता है। चाहे राम, कृष्ण, बुद्ध, कबीर, सूर, गांधी, डां0 आम्बेडकर ही क्यों न हो इन महान व्यक्तियों ने देष विदेष का भ्रमण किया और वे सभी षिक्षित व्यक्ति थे। जिन्होने भ्रमण के समय जो अनुभव किया वह उन्होने अपने विचारों के माध्यम से लोगो के समाने प्रकट किया। जिसके कारण उन्हे आज भी लोग अपना आदर्ष मानते है। षिक्षा वह आधार है, जो हमारे विचारो को आधार देते है, और प्रस्तुत करने का साहस देता है।

हमारे देष मे एक ऐसे भी महान व्यक्ति का जन्म हुआ था, जो षिक्षित नही थे, लेकिन देष और समाज को एक नवीन विचारों और दिषा दिखाई। उस महान व्यक्ति का नाम कबीर दास है। जिन्होंने समाज में व्याप्त विभिन्न कुरीतियों को विरोद्ध किया था। कबीर दास षिक्षित नही थे, लेकिन समाज और देष की समस्याओं का समझने का उनका अपना दृष्टिकोण था।

संत गंगादास की वाणी ब्रह्मविद्या अथवा सत्य की खोज का काव्य है, जो मानव जीवन एवं समाज को आदर्षोन्मुख करके आनंद प्रदान करता है। दास जी की वाणी मानव जीवन को सत्य की ओर मोड़ने हेतु एक प्रभावषाली साधन है।

अमृत रस में प्याला घोल पिया! पी लिया था उमर जरासी में।
अमर भई भय काल बिनास। पिया ने पूरन कर दई आसा।
गंगादास उसी नसे भासा। हो गया अमल झकझोल पिया।

संत गंगादास ने भारतेंदु हरिष्चन्द्र से 20 वर्ष पूर्व ही खड़ी बोली के विपुल रचनाकार आधुनिक हिन्दी साहित्य को एक नयी दिषा दी। उनके करव्य में निगुर्ण और सदगुण दोनों भक्ति धारा पूरी तन्यमयता से प्रभावित रही है। यही कारण है कि उनके साहित्य पर एक दर्जन से अधिक हो चुके शोध कार्य उनकी प्रमाणिकता सिद्ध करते है। स्वाधीनता संग्रमा की

वीरागंना शहीद रानी लक्ष्मीबाई का अंतिम संस्कार कर उन्होंने राष्ट्रभक्ति को कुषल परिचय दिया। कौरवी भाषा साहित्य को उनकी अप्रतिम देन है।

1. भारतीय धरोहर – डॉ0 जे.एन. शर्मा 'हंस' (नेट)
2. कवि संत गंगादास को हिन्दी खड़ी बोली के साहित्य के भीष्म पितामह कहा है–डॉ0 'हंस'
3. बलिदान दिवस 1858 वीरांगना रानी लक्ष्मीबाई –राणा भूपेन्द्र सिंह (नेट)
4. 'बिखरे मोती' नाम पुस्तक – लेखक तेजपाल सिंह पृ. सं. 33,34

अध्याय–4

सामाजिक समरसता, आत्मबल जागरूकता में महात्मा गंगादास का योगदान

समाज में समरसता केवल षिक्षा के माध्यम से आ सकती है क्योंकि षिक्षा जो मानव को अंधकार से प्रकाष की ओर अग्रसर करती है तथा आत्मबल एक जागरूकता का बीज उत्पन्न होता है। षिक्षा वह बीज है। जिसके आधार के बिना मानव जाति का विकास असम्भव है। षिक्षा ही मानव के जीवन का महत्वपूर्ण अंग है। जिसके बिना मानव को अपने अधिकारो और नियमों की जानकारी नही होती है।

सामाजिक समानता अर्थात् जातिगत भेद–भाव एवं अस्पृष्यता का जड़ मूल से उन्मूल कर लोगो में परस्पर प्रेम और सौहर्द बढ़ाना तथा समाज के सभी वर्गों एवे वणों के मध्य एकता स्थापित करना, समरसता का अर्थ है। सभी को अपने समान समझना । सृष्टि में सभी मनुष्य एक ही ईष्वर की संतान है और उनमें एक ही चैतन्य विद्यमान है। इस बात को हृदय से स्वीकार करना।

भारतीय संस्कृति में कभी किसी के साथ किसी भी तरह के साथ भी तरह का भेदभाव स्वीकार नही किया गया है। हमारे वेदो में भी जाति या वर्ण के आधार पर किसी भेद भाव का उल्लेख

नही है। वेदो मे जाति के आधार पर नी बल्कि कर्म के आधार पर वर्ण व्यवस्था बतायी गयी है।

समय के साथ–साथ इन व्यवस्थाओं में अनेक विकृतियां आती गई। इसके परिणाम स्वरूप अनेक कुरीतियां एवं कुप्रथाओ जन्म हुआ इन सबके कारण जातिगत–भेदभाव छूआछूत आदि का प्रवृति बढती गई। इसी के चलते उच्च वर्ग एवं निम्न वर्ग का जन्म हुआ।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज के अभाव में न तो चैन सुखपूर्वक रह सकता है, और न प्रगति कर सकता है। यही कारण है कि मनुष्य अपने समुदाय परिवार के प्रति भावात्मक रूप से संबद्ध रहता है। परिवार, जाति, धार्मिक संप्रदाय किसी को लेकर, इसके सदस्यों के मध्य भावात्मक एकता होती है। जो इस समाज या समुदाय की एकता के रूप में जानी जाती है। किसी राष्ट्र के अस्तित्व के लिये यह परम आवष्यक है क्योंकि उसके सदस्यों में भावानात्मक एकता हो। इससे ही दूसरे शब्दों मे राष्ट्रीय एकता कहते है।

देष की विभिन्नता ही दर्षाती है समाजिक समरसता

भारत देष में अनेक जाति, धर्म, और विभिन्न भाषाओं, वेष–भूषा, सभ्यातएं संस्कृति के लोग हमारे देष भारत मे रहते है। विभिन्नता होने पर भी हमारे देष की एकता और अखंडता सम्पूर्ण विष्व में जानी जाती है। हमारे देष की संस्कृति मे तो विभिन्नता में भी समरसता है। ठीक उसी प्रकार यहां की प्रकृति में विभिन्नता

होते हुये भी समरसता का संदेष देती है। हमारे देष की संस्कृति हो या प्रकृति हो दोनों में समरसता गुण समाया हुआ है।

नीता श्रीवास्त, आचार्य, सरस्वती षिषु विद्या मंदिर – हमारा देष एक विषालकाय देष है। यहां कई जाति, धर्म और विभिन्न संस्कृति के लोग रहते है। इन धर्मों के अलग–अलग नियम होते है। जिस कारण से किसी भी देष के विकास में साममाजिक भेदभाव से कई सारी समस्या उत्पन्न होती है। सामाजिक समरसता से तात्पर्य इस सामाजिक भेदभाव को खत्म करना और समाज के सभी वर्गों के लोगो में प्रेम भाव उत्पन्न करके सामाजिक समरसता स्वीकार करना और प्रेम पूर्वक रहे और उनमें एकता हो, यही सामाजिक सरसता कहलाती है। जिस देष में सामाजिक समरसता रहती है। उस देष का विकास तीव्र गति से होता है।

सस्मिता आचार्य, सरस्वती षिषु विद्या मंदिर – हमारा देष भारत भूमि संतों–मुनियों और राष्ट्रभक्तो के खून पसीने से सीची गई तपो भूमि है। यहां बई जातियों और धर्मों के लोग रहते है। भाषा, धर्म जाति, खानपान देवी–देवताओं में भी विविधता है लेकिन इन विविधता के साथ भी हम सभी भारतीय है। यह सबसे बड़ी विषेषता है।

वैदिक साहित्य में सामाजिक सरसता–मुरलीधर चांदनी वाला

भारतीय साहित्य का जहां से उदगम हुआ वह स्त्रोत निर्विवाद रूप से वेद आर्य काव्य की श्रेणी में आते है। हमारे प्राचीन ऋषि मनुष्य थे, समाज के साथ थे। वे आपसी सरोकार और सदभाव को सबसे अधिक मूल्यवसन समझते थे। वे आपसी प्रेम और सदभाव को सबसे अधिक मूल्यवान समझते थे। मनुष्य की जिजीविषा उसके समाजिक सरोकर और सामाजिक जीवन की योजनाओं के सुन्दर चित्र वेदों में से बार–बार झांकते हुये दिखाई पड़तें है। सर्वप्रथम वैदिक ऋषियों ने ही उस समाजिक समरता की परिकल्पना की जो परवार्तीकाल में हमें भारतीय साहित्य की आत्मा के रूप में पहचान में आती है। ऋग्वेद के सबसे अंत में जो समापन गीत है उस पर हमारा ध्यान जाता है। यह सामाजिक समरसता का पहला गीत है, जो सदियों ये समवेत स्वर में गाया जाता है।

गीत – सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मानांसि जानताम् ।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानना उपासते।।
समानो मंत्रः समितिः समानी
समानं मन स चित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रामभि मंत्रये वः
समानेने वो हविषा जुहोमि।।
समानी व आकूतिः समाना हृदयानिवः।
समानममस्तु वो मानो यथा वः सुसहासति।।

मनुष्य आदिकाल से ही सामाजिक समरसता की भावनाओं को सींचते हुये यहां तक आया है। वह अंधकार और

मृत्यु से घिरा होने के बाद भी सदैव मनुष्यता से भरा हुआ दिखाई देता है।

समरसता की षिक्षा मानव को प्रकृति से लेनी चाहिए क्योंकि इतनी विभिन्नता होते हुए भी प्रकृति किसी के साथ भेदभाव नही करती है, चाहे वह किसी जाति, धर्म या प्रान्त का व्यक्ति क्यों न हो तथा सभी मानव प्रकृति का समरसता के साथ उसका उपभोग करते है। जैसे सूर्य का प्रकाष सभी मानव जाति के लिए एक है। फल–फूल, जल, प्रकृति से उत्पन्न होने वाले खाद्य पदार्थ सभी मानव जाति के लिये है। मानव को प्रकृति के नियम का पालन करना चाहिए।

प्रकृति मानव को एक ही षिक्षा देती है के विभिन्नता में भी एकता होती है। जैसे फूलो की महक सभी के लिये है।

भारतीय साहित्य का मूल स्वर सामाजिक समरसता ही है। इस सूक्त के मध्य कि–

समानी प्रपा सह वोन्न भागः,

समाने योक्त्रे सह वो युनिज्म।

सम्च्चोडग्नि सपर्यतारा,

नाभिरमिवाभितः।।

–अर्थववेद [1]

समरसता के संत – सतीष पेडणेकर

कबीर ने बनारस के घाट से जन जन के बीच ज्ञान की वाणी मुखरित कर समरसता समाज के प्रति एक मानस बनाया था। लोगो को समझाया था कि जात, पात, वर्ण भेद आदि भूलकर सबको एक ही मानो सबकी जात सबको एक ही मानो सबकी जात मानवता है। भारत में प्राचीन काल से ही वर्ण व्यवस्था के उपरी भेदों के विरूद्ध समाज को जाग्रत करने के लिये संतो–महंतो ने अनेक सूत्र दिये और सत् मार्ग की दिषा बताई। भारतीय संस्कृति में य बात अनादि काल से रही कि मानव किसी भी भेदभाव से परे एक है। वेदव्यास से लेकर वाल्मिकी तक और किसी एक विवेकानंद से लेकर महात्मा गांधी तक सभी ने अपनी तरह सरलतम शब्दों में 'सब जन एक' का मंत्र दिया है।

इस देष के इतिहास में स्वामी रामानंद पहले संत पुरूष थे, जिन्होने इस देष के समाज को धर्म–संघ में उचित प्रतिनिधित्व देकर उन हजारों जातियों और उपजातियों में बिखरे निराषा और पराभव अंधकार में डुबे निष्प्राण समाज में पुनः प्राण फूंक कर धर्म के सही मार्ग को समझाया। इससे पूर्व के जितने भी संत–महापुरूष हुये उन्होने दार्षनिक आधार पर विष्वबंधुत्व 'बसुधैव कुटुम्बकम्' की बात तो की थी, परन्तु धर्म–व्यवस्था में उसके पूरी तरह प्रतिष्ठापित होने में कही न कही कसर रह गयी थी।

रामानंद प्रतीक थे, उस काल के जब भक्ति का धार्मिक किसी एक छोटे हिस्से तक समित न रहकर सारे भारत का आंदोलन बन गया था। उसने जाति, वर्ण, और लिंग भेद से परे

जाकर सारे देष को अपनी आगोष में ले लिया था। उस समय के संतों ने समाज को अध्यात्म से जोड़ दिया था। एक ही संदेष था कि सभी में एक शक्ति का वास है। तो फिर सामाजिक भेदभाव कैसा, धर्म के रास्ते पर सब समान है

बाह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः,
ऊरू तदस्य यद्वैष्यःपदभ्यां शूद्रोऽअजायता ।।

–ऋग्वेद संहिता

समरसता का सनातन दर्षन–

समतापरक सुसंस्कृत समाज का निर्माण, संचालन एवं अस्तित्व किसी व्यक्ति, जाति, वर्ण, वर्ग या समुदाय विषेष के योगदान से नही होता है। समाज की संपूर्णता एवं सजीवता के निमित प्रत्येक व्यक्ति की खुषहाली, सहभागिता एवं समर्पण बेहद जरूरी है, चाहे वह किसी भी जाति संप्रदाय, वर्ण या समुदाय का हो।

'श्रीराम द्वारा केवट को गले लगाना सामाजिक समरसता का श्रेष्ठ उदाहरण है।'

समाजिक समरससता का मूलमंत्र समानता है, जो समाज में व्याप्त सभी प्रकार के भेदभावों एवं असमानताओं को जड़–मूल से नष्ट कर नागरिकों में परस्पर प्रेम एवं सौहार्द में वृद्धि तथा सभी वर्गों में एकता का संचार करती है। समरसता का आषय भी है कि संसार में विद्यमान चेतन–अचेतन जगत के समस्त घटको को

अपने समान समझना, आदर–सत्कार एवं प्रेम करना, क्योंकि ये सब स्व का ही विस्तार है। हमे मनसा–वाचा–कर्मणा से यह तथ्य स्वीकार करना पडेगा कि प्रकृति के सभी घटक चेतनशील एवं उन सभी के विकास से ही मानव समाज का सर्वतोमुखी विकास संभव है।

समरसता का सूत्र – हमारी ज्ञानात्मक चेतना के अक्षय स्त्रोत वेदों मेमं भी संपूर्ण सृष्टि को एक परिवार माना गया है। इनमें मेरे–तुम्हारे जैसे संकुचित भावों के लिए कोई स्थान नही है–

अयं निजः परो वेति गणना लघु चेतसाम्।

उदारचरितानां तू वसुधैव कुटुम्बकम्।।

जो संपूर्ण विष्व में सामंजस्य, सौमनस्य एवं सौहार्द की बात करता है –

सहृदयं सामनस्यमविद्वेषं कृणोर्मि वः।
अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या।।

हमारी सामाजिक एकता एवं समरसता का बाधित करने वाली विसंगतियां सनातन संस्कृति का अंग कतई नही थी। परतंत्रता के सैकड़ों वर्षों में आक्रमणकारियों ने हमारे धार्मिक ग्रंथों एवं सामाजिक परंपराओं की व्याख्याओं में मिथ्या तथ्य जोड़कर उन्हें विकृत कर दिया । कर्म आधारित वर्ण व्यवस्था अनेकानेक विकृतियों, कुरीरितियों, एवं कुप्रथाओं से आच्छादित हो

गई तथा उसका मूल स्वरूप विकृत हो गया। इसमें वर्णगत भेदभाव , छुआछुत आदि प्रवृति पनपी तथा उच्च,मध्य तथा निम्न वर्गों का उदय हुआ।

छान्दोग्योपनिषद, रामायण, महाभारत, अध्यात्म रामायण आदि आर्य ग्रंथों में आदर्ष राज्य का जो निरूपण किया गया है, उसका सारतत्व रामचरित्रमानस में निहित है। श्रीराम के 14 वर्ष का वनवास काल वनवासियों, जीव–जन्तुओं, वानरों, नदी–नाल, पक्षियों, पर्वतों, वनस्पतियों एवं प्रकृति के अन्यान्य घटकों में साहचर्य एवं समरसता का आदर्ष काल था। श्रीराम के जीवन और व्यवहार जैसा समरसता का आदर्ष उदाहरण अन्यत्र दिखाई नही देता। वनवास काल में जब श्रीराम की भेंट शबरी से हुई तो उन्होंने उनको माता के समान आदर दिया।

प्राचीन भारतीय जीवन में समरसता को रामकाव्य के साथ–साथ मध्यकालीन कृष्णकाव्य भी जीवंत रखता है। कृष्ण भक्त कवियों का काव्य मानव मात्र के एकत्व के मूल सिद्धांत से अनुप्राणित है। ये कवि मन–वचन–कर्म से भारतीय समाज को समता, ममता तथा एकता के सूत्र में बांधकर समरस समाज निर्माण की व्यापक चेष्टा करते दिखाई देते है।

कवि सूरदास के काव्य में समाजिक समरसता समाज व्याप्त है। भक्त चाहे जिस जाति, कुल, गोत्र, वंष, का हो, वह श्रीकृष्ण को स्वीकार्य है–'जाति–पाति कोउ पूछत नाही श्रीपति के दरबार।'

सूरदास ने सामाजिक समरसता तथा अपने उपास्य श्रीकृष्ण के समदर्षी स्वभाव का भी वर्णन किया है।

वनवासी कल्याण आश्रम भी वनवासी क्षेत्रों में समरसता स्थापित करने के लिये भगीरथ प्रयास कर रहा है। सेवा भारती भी उपेक्षित जातियों में सेवा एवं षिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनी योगदान दे रहा है। **डां0 भीमराव अंबेडकर** तो कहा करते थे, 'बंधुता ही स्वतंत्रता तथा समता का आष्वासन है, स्वतंत्रता तथा समता की रक्षा कानून से नही होती है।'

स्वामी विवेकानंद – 'हर व्यक्ति स्वयं पूर्ण है तथा उसे अपने बंधुओं के उपर शारीरिक, मानसिक, अथवा नैतिक किसी भी प्रकार शासन चलाने की आवष्कता नही है। खुद से निचले स्तर का कोई मनुष्य नही होता है, इस मान्यता का जब वह धारण कर लेता है तभी वह समानता का उच्चारण कर सकता है। जब समानता का भाव स्थापित होगा तभी मनुष्य–मनुष्य के बीच की दूरी कम होगी। परस्पर प्रेम एवं सहयोग की भावना बढ़ेगी और सहयोग से समृद्धि प्राप्त होगी।

जहां सुमति तहं संपति नाना।

जहां कुमति तहं बिपति निदाना।।

पंजाब केंन्द्रीय

सामाजिक समरसता–

सामाजिक समरसता के मूल घटक है, जिन्हें ही सामाजिक समरसता की अंतवस्तु माना जाता है।

1. शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व– यह सामाजिक समरसता का एक महत्वपूर्ण घटक है क्योंकि समरसता संघर्ष के सिद्धान्त पर आधारित नही है, इसमें हितों और आकाक्षाओं में संघर्ष नही है, यह सामाजिक–सांस्कृतिक व राजनैतिक विरोध से अलग सह–अस्तित्व और परस्स्पर निर्भरता की अवधारणा है। सामाजिक समरसता पहचान और अस्मिता का प्रष्न नही है, न ही इसमे पृथक अस्तित्व है। इसमें तो शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व है।
2. सहयोग– यह भी समाजिक समरसता का एक महत्वपूर्ण घटक है। एक साथ मिल–जुलकर कार्य और कार्य को साझाा करने के भाव को ही सहयोग कहतें है। अतः साथ मिलकर कार्य करने या सहयोग से समाज में समरसता स्थापित होती है।
3. परवलम्बन निर्भरता– यह भी सामाजिक समरसता का एक महत्वपूर्ण घटक है। समाज के सभी लोग किसी न किसी काम के लिए परस्पर निर्भर रहतें है। लोगों में परस्पर निर्भरता या परावलम्बन समाज में समरसता स्थापित करते है।
4. सामाजिक समरसता के मूल घटक– समन्वय, सरोकार, समूह चेतना, सदस्यता आदि।

5. धार्मिक एवं सामाजिक कार्यक्रम – प्राचीन काल से ही विभिन्न धार्मिक एवं सामाजिक कार्यक्रम जैसे– यज्ञ, अनुष्ठान एवं पर्व समाज में समरसता स्थापित करते रहे है, क्योंकि इनमें समाज के सभी लोग भाग में जाति लेते है, जिससे समाज में समरसता बढ़ती है।
6. कला– यह सामाजिक समरसता का एक महत्वपूर्ण घटक है। कला में जाति वर्ग भेदभाव का स्थान नही है। अतः यह सामाजिक समानता का प्रतीक है। कला संस्कृति की वाहिका है। अतः कला हमारे सामाजिक कुरीतियों, अस्पृष्यता भेदभाव तथा अभावों का मामिक चित्रण प्रस्तुत करके कला लोगों के ह्रदय में परिवर्तन लाकर अंत समूह संपर्क को बढ़ाकर समरसता को प्रोत्साहित करती है।
7. संविधान– संविधान से ही सामाजिक समरसता संभव है। समाज में सामाजिक न्याय एवं समता की व्यवस्था करता है, तथा एक प्रगतिषील समाज की नींव रखता है। संविधान में कई ऐसे प्रावधान किये गये है, जो सामाजिक समरसता को बनाये रखने में मदद करते है। जैसे संविधान के अनुच्छेद 14 में विधि के समक्ष समानता का उल्लेख है, तथा अनुच्छेद 15 में धर्म, वंष जाति, लिंग, जन्म स्थान आदि के आधार पर भेदभाव का निषेध किया गया है। इस तरह संविधान समता के मूल अधिकार व भाईचारा बढ़ाने के मूल कर्त्तव्य के माध्यम से सामाजिक समरसता को बढ़ावा देता है।

8. **साहित्य एवं सामाजिक समरसता** – साहित्य एवं सामाजिक समरसता को बनाये रखने में अपनी अहहम भूमिका अदा की है। साहित्य में सामाजिक षिक्षक, एकता, भाईचारे की भावना को विकसित करने की प्रवृति पाई जाती है। समाज में जो कुछ सुसंगत हो रहा है, वह साहित्य का विषय वस्तु है, जिसका सीधा प्रभाव लोगों पर पड़ता है। साहित्य के सृजन के माध्यम से लोगों में मानसिक परिवर्तन को प्रेरित कर सामाजिक समरसता का विकास संभव है।
9. **षिक्षा एवं जागरूकता** – सामाजिक समरसता को बनाएं रखने के लिए आवष्क तत्व है, क्योंकि जब समाज के सभी वैचारिक षिक्षण एवं परामर्ष होगे तो सामाजिक समरसता को बढ़ावा मिलेगा।

समाज की कल्पना मानव से की गई है। मानव के सभी अंग षरीर को संपूर्ण बनाने के लिए सभी अंग महत्वपूर्ण है, उसी प्रकरी इस समाज का संचालन करने के लिए इसको चार वर्गों में विभाजित किया गया है। बाह्मण, क्षत्रिय, वैष्य, शूद्र। षरीर के अंग कोई किसी से छोटा या बड़ा नही होता है उसी प्रकार समाज में कोई जातिवाद नही होना चाहिए, क्योंकि यह समाज को चलाने के लिए चार स्तभ्म है। जिसके बिना समाज की कल्पना नही की जा सकती है।

डां0 अंबेडकर ने हिन्दू धर्म की कुरीतियों का प्रखर विरोध करते रहे लेकिन हिन्दू धर्म की आत्मा अद्वैत को कभी नकार न सके।

संत कबीर दास भक्ति काल के एक ऐसे कवि है जो जीवन भर समाज में व्याप्त कुरीतियों पर कुठार घात करते रहे और समरसता की अलख जागाते रहे। वे कर्म प्रधान समाज को विषेष महत्व देते थे। लोक कल्याण ही उनके जीवन का एक मात्र उद्देष्य था।

आधुनिक भारतीय धार्मिक साहित्य और संत महंतो के वचनो में सदैव यही कहा है कि भगवन राम, कृष्ण और महात्मा बुद्ध से बाद के संत परम्परा तक ने भेदभाव पर आधारित समाज व्यवस्था के विरूद्ध आवाज सदैव तीव्र रही सबका कहना है कि सभी वर्ण समान है।[2]

संत गंगादास – आधुनिक काल में समाज में फैली कुरीतियों और जातिवाद का तीव्रतम् हुआ। समय–समय पर समाज में समाज सुधारको का जन्म होता रहता है। दास जी का जन्म गुलमा भारत देश मे हुआ था। उस समय समाज और देश की क्या स्थिति होगी। इस की कल्पना आज का मानव उस समय की कल्पना भी नही कर सकता है।

हिन्दी भाषा को अपनी बात कहने का माध्मय बनाया, क्योंकि एक राष्ट्र को जोड़ने के लिये एक भाषा होनी चाहिए। जो हिन्दी ही हो सकती थी। दास जी ने हिन्दी साहित्य में राजनैतिक और राष्ट्रीय चेतना का आरम्भ कर स्वतंत्रता की अग्नि को

प्रवज्जलित किया। महात्मा गांधी ने भी हिन्दी भाषा तथा चरखे को स्वराज्य प्राप्ति का साधान माना था।

अंग्रेजी शासन की स्थापना ने देश में जातिवाद व्यवस्था धनवान एवं गरीब, राजा एवं प्रजा के बीच की खाई को चौड़ा कर दिया । दास जी ने इस व्यवस्था पर भारी चोट की और उन्होंने अपने वेद सम्मत दर्शन को व्यक्त करने के लिए हिन्दी की खड़ी बोली को माध्यम बनाकर राष्ट्र को एक सूत्र में पिरोने का काम किया। उन्होंने हिन्दी साहित्य राष्ट्रीयता का प्रथम विगुल बजा दिया। हिन्दी की खड़ी बोली के प्रथम कवि कहे जाने वाले दास जी ने अपने साहित्य में राष्ट्रीवादी भावना को उभारा और अपने काव्य में तत्कालीन ब्रिटिश शासन की आलोचना की। अंग्रेजी हुकुमत मे इसाई धर्म गुरू लोगो को अपने धर्म में दीक्षित कर रहे थे। वैदिक धर्म की सर्वत्र निन्दा हो रही थी।

महाघोर आया कली, पड़ी पाप की धूम।
पंथ वेद के छिप गये, ना होते मालूम।।
ना होते मालूम पाप ने दाबी परजा।
फिर सुख कैसे होये धमक का हो गया हरजा।।[3]

1. hindiviek.or
2. mpgkpdf.com
3- बिखरे मोती– तेजपाल सिंह – पृ.सं.– 36, 37

अध्याय–5

महात्मा गंगादास के साहित्य में आध्यात्मिक अवधारणा और सामाजिक कुरीतियां

भारत एक आध्यात्मिक देष है। इसमें विभिन्न महात्माओं का जन्म हुआ है। जिन्होंने अपने ज्ञान और प्राकृतिक वातावरण के अनुभव के आधार पर तथा वेद उपनिषद के अध्ययन से प्राप्त ज्ञान से महात्माओं ने समाज और देष को एक नवीन दृष्टिकोण दिया है। आधुनिक भारत की नीव स्थापित करने मे सहायता की है, एक समृद्ध इतिहास के कुछ मामलों में, राजनितिक कार्यवाही और दार्षनिक षिक्षाओं के माध्यम से दुनिया भर में अपने प्रभाव से प्रभावित किया है। यह एक साथ समाज सुधारकों ने समाज मे व्याप्त विभिन्न कुरीतियों के प्रति आंदोलन किया।

समाज सुधारको के नाम– डां0 भीमराव अम्बेडकर, महात्मा गांधी, कबीर दास, महात्मा बुद्ध, स्वामी दयानन्द सरस्वती, राजा राम मोहन राय, महावीर स्वामी, मदर टेरेसा, स्वामी विवेकानंदा, सावित्री बाई फुले, गुरूनानक देव, ईष्वर चन्द्र विद्यासागर, ज्योतिराव गोंविदराव फुले आदि।

भारतीय समाज चार वर्गों में विभाजित है। जैसे, बाह्मण, क्षत्रिय, वैष्य, षूद। जो समाज के चार स्तम्भ है। जिसके बिना समाज की कल्पना भी नही की जा सकती है। यह मानव षरीर के

समान है। यदि मानव का कोई अंग न हो तो मानव के जीवन में अनेक समस्याएं होती है। उसी प्रकार यह समाज भी है, लेकिन मानव इस बात को नही समझता है। वह जातिवाद के मध्य फंसा रहता है। जिसके कारण समाज में अनेक कुरीतियों ने जन्म लिया है। जातिवाद की समस्या आज की नही है, यह प्राचीन काल से चली आ रही है। जातिवाद का वृक्ष अति विषाल हो चुका, जिसकी जड़े बहुत गहरी है।

समाज मे व्याप्त अनेक कुरीतियों को समाप्त करने के लिए समय–समय विभिन्न संतो और महात्माओ ने समाज को अपने विचारो समाज के समाने प्रस्तुत किया है और सरल से सरल वाणी का प्रयोग किया जिससे समान्य मानव को समझने में कोई परेषानी न हो और उस विचार को मानव अपने पदों के माध्यम से समान्य जन तक अपने विचार व्यक्त का सके। समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने के लिए आंदोलन भी हुये।

कबीर दास समाज सुधारक के साथ हिन्दी साहित्य के एक महान कवि थे। दास जी ने सत्य के माध्यम से समाज को दर्पण दिखाया। उनकी वाणी में सरलता के साथ एक कोठर षिक्षक का रूप देखने को मिलता है। सत्य का ज्ञान देकर समाज का कल्याण किया। दास जी ने उन कुरीतियों की निंदा की जो मानव जाति के विकास में काटे के समान थी। दास जी ने जातिवाद का घोर विरोध किया। मानव मे व्याप्त अनेक कुसंगतियों से मानव को परिचित कराया, जैसे छल, कपट, निंद, अहंकार, जाति

भेद–भाव, धार्मिक पाखंड आदि को छोड़कर एक सच्चा मानव बनने की प्ररेणा दी। समाज में चल रहे अंधविष्वासों रूढियों पर करारा प्रहार किया।

कबीर दास ने मूर्ति पूजा का का विरोध किया क्योंकि कुछ जनजातियों को मन्दिर में प्रवेष वर्जित था। दास जी ने का कि ईष्वर की उपासन के लिये मूर्ति की कोई आवष्यकता नही है। हम ईष्वर को भक्ति और साधना से भी प्राप्त कर सकते है। दास जी ने बाह्य आडम्बरों का खण्ड किया है। दास जी ने भक्ति और साधना को अलग ही महत्व दिया है। अपने ज्ञान के अनुभव और प्रकृति से प्राप्त ज्ञान से मानव समाज के समाने अलग ही दार्षनिक विचार प्रस्तुत किया है। कबीर दास जी ने गुरू को ही भगवन बताया है क्योकि उनके मागै दर्षन के बिना मानव जाति का कल्याण नही हो सकता है।

सतगुरू की महिमा अनंत–अंनत किया उपगार।
लोचन अनंत उघाडिया अतंत दिखावणहार।।

–गुरूदेव कौ अंग

जब हमारा देष अंग्रेजो की गुलामी से मुक्त होने के लिये निरन्तर प्रयास कर रहे थे। हमारे देष का प्रथम स्वतन्त्रता संग्रमा 1857 ई. में हुआ था। इस संग्रमा में अनेक वीरों और महात्मा ने इस संग्रमा में अपना योगदान दिया था। इस संग्रमा में एक महान संत गंगादास जी ने महत्वपूर्ण योगदान दिया था। जो झांसी की रानी के मार्ग दर्षक बने। वे अपने विचारों और वातावरण के

अनुसार अपने उपदेष्यों के माध्यम से समान्य जन को आजादी के लिए प्रेरित करते थे।

संत गंगादास अपने समय के शासन काल की आलोचना करते हुये कहते है। ब्रिटिष भ्रष्ट शासन अनयायकारी न्यायलायों बेईमान न्यायाधीषों लालची अधिकारियों और रिष्वतखोर कर्मचारी का यथार्थ चित्रण करते हुये, संत दास जी ने यहां तक कहा है कि वास्तवकि चोरो के विरूद्ध किये गये बाद भी उत्कोच–लोलुप न्यायधीष खारिज कर देते है। न्यायालयों में की मेज पाप पूर्ण कार्यों का कलुष स्थान बल गई है।

कबीर दास के समय मे समाज में जातिवाद था और संत गंगादास के समय देश गुलाम था। कबीर जी और गंगादास जी दोनो अपने समय के क्रान्तिकारी, संत, कवि, समाज सुधारक, दार्षनिक थे।

संत गंगादास–प्रबोधन के पद

हीरा जन्म अकारथ हारे।
पागल सब इकरार बिसारे।
गंगादास कह जन्म गुजारे।
भूल गया भगवान।

कबीर दास– गुरूदेव कौ अंग

दीपक दीया तले भरी,वाती दई अघट्ट।
पूरा किया बिसाहूणा, बहुरि न आंवौ हटट।।

भारत के समाज सुधारक– किसी भी समाज में विविध और विभिन्न प्रकार के लोग रहते है। वे विभिन्न धर्म, जाति, रंग, लिंग और विभिन्न विष्वासों को मानने वाले हो सकते है। उनमें यह उम्मीद की जाती है कि वे समाज से सामंजस्य बिठाएं और बिना किसी भेदभाव के साथ रहे, आदर्ष स्थिति तो तब मानी जाएगी जब समाज के सभी वर्गों में बराबरी, आजादी और भाईचारा हो। सम्पूर्ण दुनियां का मानव समाज यह बताता है कि रह जगह कई तरह की शोषणकारी प्रथाएं प्रचलित है, शोषणकारी सोच समाज में मानव की सर्वोच्चता, सत्ता और शक्ति का लालच ही मानव को अन्य मानव का शोषण करने का मुख्य कारण होता है। उच्चवर्ग, निम्नवर्ग का शोषण करते है, पुरूष महिलाओं का, और अन्य जाति और धर्म के लोग दूसरे जाति और धर्म का शोषण करते है। मानव का स्वभाव ऐसा है कि स्वयं को श्रेष्ठ मानना ही मानव को अन्य व्यक्तियों का शोषण का कारण होता है।

समाज मे व्याप्त अनेक कुरीतियों के कारण समाज में सदैव समन्वय का अभाव रहा है जैसे जातिवाद, सती प्रथा, आदि को समाप्त करने के लिए अनेक समाज सुधारको के प्रयास से इन सभी प्रथाओ का अंत हो सका। भारत सौभाग्यषाली है। उसके

इतिहास में कई असाधारण इंसान हुए जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन समाज और देष को समर्पित कर दिया। इन असाधारण पुरूष और महिला समाज सुधारकों के जीवन और उनके कार्यों के प्रयासो की सराहना करनी चाहिएं।

संत गंगादास – दास के समय समाज रूढिग्रस्त और भाग्यवादी था। आर्थिक विपन्नता उस समय इतनी नही थी, परन्तु रूढियों और परम्पराओं के कृत्रिम पालन करने में ही दलित होता जा रहा था।

लोगों को मुहूत्तों, शुभाशुभ दिनों, जादू–टोनों, कवचों, के झाड़–फूंक करने वाले ओझाओं आदि में बहुत विश्वास था। पशु–पक्षियों के रास्ता कट जाने पर वे शुभाशुभ का विचार करने लगते थे। समाज में बाल विवाह की कुरीति प्रचलित थी। कन्याओं का विवाह 3,4 और लड़कों का विवाह 6,8 वर्ष की अवस्था में हो जाता था।

अंग्रेजी शासन स्थापित होने के बाद कुरू प्रदेश का सामाजिक जीवन कट्टर गतिहीन, रूढिबद्ध, असामाजिक एवं अनुदार अन्धविश्वासों, कुरीतियों तथा कुप्रथाओं से भर गया था। समाज उसस तालब की भांति था, जिसके जल की उन्मुक्त गति अवरूद्ध हो गयी थी।

समाज को पतन के गर्त्त में गिराने का उत्तरदायित्व अनेक पाखण्डी पन्थों उन स्वार्थी साधुओं पर भी था जो कपड़े रंगकर

जनता को बहका रहे थे। अनेक संत पाखण्डी, दम्भी और निरक्षक भट्टाचार्य होते थे, ज्ञान शून्यता के कारण महाकवि की आत्मा तड़प उठती थी। दास जी कहते है कि 'संत हंसों के वेश में बगुले है।' संत तो सदैव आत्मतत्त्व में रमण करते है। संसार में कभी आकर्षित नही होते है। धार्मिक सामाजिक और राजनीतिक परिस्थतियों के परिप्रेक्ष्य में समाज गंगादास–काव्य में सजीव रूप से मुखरित हुआ है। दास जी की वाणी सामाजिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

दाबी सारी पाप ने, परजा हो गयी दीन।

कर्म धर्म सब छुट गये, ऐसी मती मलीन।

ऐसी मती मलीन जीव जड़ भये बिचारे।

उदर भरे सोई कार बरन करते हैं सारे।

गंगादास–जन कहें कली ने करी खरबी।

बेबस हो गये जीव, मती पापों ने दाबी

भ्रष्ट शासन और समाज।।77।। [1]

राजा राम मोहन राय – 19 वीं शताब्दी के आरम्भ में, भारतीय समाज कई सारी सामाजिक बुराईयों से घिरा हुआ था, जैसे सतीप्रथा, जातिवाद, धार्मिक अंधविष्वास आदि। राय सर्वप्रथम व्यक्ति थे। जिन्होंने ऐसी अमानवीय प्रथाओं को पहचाना और इनके खिलाफ लड़नं का प्रण किया। इन्हें भारतीय

पुनजागरण का षिल्पकार और आधुनिक भारत का पिता माना जाता है।

राम मोहन राय का जन्म बंगाल के हुगली जिले के राधा नगर में 22 मई 1772 को हुआ तथा इनका संबंध पारंपरिक ब्राह्मण परिवार से था। राय जी की मृत्यु 27 सितंबर 1833 को इंग्लैड के ब्रिस्टल में इनका निधन हो गया।

राम मोहन राय खुले विचारों के थे। वे पष्चिमी प्रगतिवादी सोच से बहुत प्रभावित थे तथा वे कई धर्मों का अध्यापन में भी बहुत निपुण थे। वे इस्लाम के एकेष्वरवाद, सूफी दर्षन शास्त्र के तत्वो से, ईसाइयत की आचारनीति और नैतिकता से और उपनिषद के वेदांत दर्षन से प्रभावित थे। उसका मुख्य उद्देष्य उन बुराइयों को मिटाने की ओर था जो हिन्दू समाज के चारों ओर फैली थी।

उन्होंने हिन्दूओं क मूर्ति पूजा क आलेचना क और वेद के पद से अपनी बात को साबित करने की कोषिष की लेकिन वो खास योगदान जिसके लिये राम मोहन राय याद किये जाते है। सतीप्रथा को जड़ से खत्म करने के लिये किया गया प्रयास जो उनको सदैव के लिए अमर कर गया।

आधुनिक भारत का विचार सर्वप्रथम राम मोहन राय के कार्य और प्रयासों ने दिया जो चिरकाल ब्रिटिष शोषण और समाजिक बुराई के दोहरे बोझ के तहत घूम रहा था। भारत के

स्वतंत्रता के लंबे संघर्ष की शुरूआत राम मोहन राय के आधुनिक विचारों को फैलाने से हो चुकी थी। आधुनिक भारत बनाने में योगदान आधारषिला की तरह है।

20 अगस्त 1828 को राम मोहन राय ने ब्रह्म समाज की स्थापना की, जो बाद में ब्रह्मों समाज बना, इस संगठन का कार्य एक ऐसा आंदोलन था, जिसमें एकेष्वरवाद को बढावा दिया और मूर्ति पूजा की आलोचना की, समाज को ब्राह्मणवादी सोच से और महिलाओं को उनकी दुर्दषा से बाहर निकालना आदि था।

स्वामी दयानंद सरस्वती – सरस्वती जी का जन्म गुरजरात के मौरवी में 12 जनवरी 1824 को हुआ था। 21 साल की उम्र में अपना घर छोड़ दिया और स्वामी पूर्णनंद के साथ यात्रा पर निकल गये। सरस्वती जी वेदों के अध्यापन में बहुत विष्वसनीय थे, एक और नारा थाः 'वेदों की वापसी' मूर्ति पूजा और अन्य अंधविष्वासों को फैलाने के लिए आम हिन्दू धर्म का विषय–वस्तु पूर्ण के विरूद्ध है।

स्वामी दयानंद सरस्वती महिलाओं की षिक्षा के अधिकार और समान सामाजिक स्थिति के समर्थकों और हिमायती के साथ थे, उन्होंने आकांक्षा और बालविवाह आदि के खिलाफ अभियान भी चलाया। वे अंतरजातिय विवाह और विधवा विवाह के समर्थक मथे, साथ ही शूद्रों और महिलाओं को वेदों को पढ़ने और उच्च षिक्षा की स्वतंत्रता के भी समर्थक थे। अपने विचारों को आगे बढाने के लिए स्वामी दयानंद सरस्वती ने 1875 में आर्य समाज की स्थापना

की। उनका मुख्य लक्ष्य हिंदू धर्म का प्रचार करना और उनमें सुधार करना तथा वेदिक धर्मों की पूर्ण स्थापना काना था। भारत को सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक रूप से एक समान करना और भारतीय सभ्यताओं और संस्कृति पर पष्चिमी प्रभाव से लाभ। स्वामी दयानंद सरस्वती ने घोषणा की थी कि 'भारत भारतीयों के लिए है।'

ज्योतिबा गोविंद फुले – इनका जन्म 11 अप्रैल 1827 को महाराष्ट्र के सतारा में एक सब्जी विक्रेता परिवार मे हुआ था। पारिवारिक गरीबी के कारण अपनी षिक्षा पूरी नही कर पाये, लेकिन बाद में कुछ लोगो ने फुले जी के अंदर की क्षमता को पहचान लिया, जिससे उनकी मदद मिली। 12 साल की उम्र में ज्योतिबा की शादी सावित्रीबाई फुले से हुई। इनके जीवन में एक बड़ा परिवर्तन तब आया जब एक ब्राह्मण मित्र के द्वारा ज्योतिबा को अपमानित किया गया तब समाज मे व्याप्त जाति और भेदभाव के बारे मे पता चला।

ज्योतिबा ने बुारइयों को महसूस किया और इन सबके विरूद्ध आंदोलन किया। **थॉमस पेन** द्वारा लिखित पुस्तक, 'पुरूषों के अधिकार' में जातिवाद, अस्पृष्यता, महिलाओं की दुर्दषा, किसानों की बुरी स्थिति आदि के खिलाफ आंदोलन करने जैसी गंभीर सामाजिक बुराईयां शामिल है।

ज्योतिबा जी का महत्वपूर्ण कार्य महिला षिक्षा के लिए था, और पुरानी किताब खुद की पत्नी जो हमेषा अपने सपनों को

बांटती थी और पूरा जीवन उनका साथ देती थी। अपनी कल्पनाओं और रहस्यों के एक न्याय संगत और समान समाज के निर्माण के लिये 1848 में ज्योतिबा ने गर्ल्स के लिए स्कूल खोला, इस देष की पहली लड़कियों के लिए था स्कूल, उनकी पत्नी सावित्री वहां अध्यापन का कार्य करती थी, लेकिन अपनी लड़कियों को षिक्षत करने के प्रयास में ज्योतिबा को अपना घर छोड़ने के लिये मजबूर किया गया। दबाव और धमकियों के बाद भी वे अपने लक्ष्य से नही भटके और ससामाजिक बुराइयों के खिलाफ लड़े और अपने लोगो के खिलाप खुद को फैला रहे है।

1851 मे वर्थ बिग और बेहतर स्कूल की शुरूआत हुई जो बहुत प्रसिद्ध हुआ। वहां जाति, धर्म और व पंथ के आधार पर कोई भेद भाव नही था।

निम्न जाति एवं आकांक्षाओं को उपर उठाने के लिए 24 सितंबर 1873 को सत्यषोधक समाज की स्थापना की, इस समाज का मुख्य उद्देष्य यह था कि किसी के साथ जाति, धर्म और लिंग के आधार पर भेदभाव न किया जाए और समाज का निर्माण किया जाए। सत्यषोधक समाज धार्मिक रूढियों और अंधविष्वासों के खिलाफ था जैसे मूर्ति पूजा, पुजारियों के साधु और अतर्किक रीति–रिवाज आदि।

ज्योतिबा ने अपना सम्पूर्ण जीवन समाज में व्याप्त कुरीतियों के विरूद्ध आंदोलन किये।

महात्मा गांधी – मोहन दास करमचन्द्र गांधी जिन्हें महात्मा गांधी भी कहते है। भारत एवं भारतीय स्वतन्त्रता आंदोलन के एक प्रमुख्य राजनैतिक एवं आध्यात्मिक नेता थे।

गांधी का ध्यान भारतीय समाज की उन बुराइयों की तरफ गया, जिसके कारण सम्पूर्ण समाज की जड़े खोखली हो चुकी थी। भारतीय समाज और संस्कृति की गणना विष्व के महानतम संस्कृतियों से की जाती थी। लेकिन स्वस्थ परम्पराओं के स्थान पर सामाजिक बुराइयों ने स्थान ले लिया था। समाज को संगठित एवं व्यवस्थित रूप प्रदान करने के लिए वैदिक एवं आर्यों के काल में अनेक व्यवस्थाएं और परम्पराएं स्थापित हो गयी थी।

गांधी जी से पूर्व अनेक समाज सुधारक हुए जिन्होंने इस दिषा में सार्थक प्रयास किया, लेकिन गांधी जी के प्रयास यथार्थ पा आधारित होने के कारण उनके विचारों को सकारात्मक प्रभाव पड़ा। उस समय समाज में ऊंच–नीच का भेद–भाव अपनी चरम सीमा पर था। गांधी जी ने राष्ट्रीय एकता पर बल दिया और कहा के जब तक समाज में एकता का अभाव रहेगा, तब तक मानव जाति गुलामी की जंजीर से मुक्त नही हो सकते।

गांधी जी ने जातिवाद, साम्रज्यवाद, सम्प्रदायवाद आदि का विरोध किया, दक्षिण अफ्रीका में गांधी जी ने श्वेत लोगों की रंगभेद की नीति का कड़ा विरोध किया तथा फिर भारत में आकर भी उन्होंने एक समाज सुधारक के रूप में यहां पर प्रचलित

अन्याय, अत्याचार व उत्पीड़न का घोर विरोध किया और संघर्ष किया। गांधी जी सम्पूर्ण जीवन देष के लिए था।

भीम राव अंबेडकर – अंबेडकर साहेब केवल दलितों के ही नही सम्पूर्ण दुनियां के एक लीडर थे। बाबा साहेब की दूरदर्षी सोच, उनके विचार आज भी लोग समय–समय पर याद करते रहते है। अंबेडकर के विचार आज की पीढी का भी मार्गदर्षन करते है। उन्हें जीवन जीने का रास्ता दिखाते है। क्या आप जानते है कि जो बाबा साहेब आज भी करोड़ों लोगो को प्रेरित करते है, उनकी प्रेरणा कौन थे? वो कौन थे, जिन्हे बाबा साहेब अपना गुरू मानते है। अंबेडकर जी ने अपने तीन गुरू के बारे में स्वयं बताया था। अंबेडकर जी ने कहा था कि मेरे तीन गुरू है। प्रत्येक व्यक्ति के कोई न कोई गुरू अवष्य होता है। अंबेडकर ने कहा कि मै कोई वैरागी या संन्यासी नही हूं।

1. महात्मा बुद्ध

2. कबीर दास

3. ज्योतिबा फुले

हिन्दू समाज की छोटी जातियों को उच्च वर्णों के प्रति उनकी गुलामी की भावना के संबंध जाग्रत किया था। इस तरह अंबेडकर थे। अंबेडकर कहते है कि इनके विचारों ने मुझे अधिक प्रभावित किया और मेरा जीवन इन गुरूवो की षिक्षा के कारण यह जो विचार इन्ही गुरूवों का आषीर्वाद है।

विनोबा भावे – विनोब जी आधुनिक भारत के मत्वपूर्ण मानवतावादी और समाज सुधारको में से एक है। इनका जन्म महाराष्ट्र के रायगढ़ जिले के गागोडे गांव में ब्राह्मण परिवार में नरहरि शूंभ राव और रूक्मणी देवी के यहां 11 सितंबर 1895 को हुआ था। ये भगवतगीता से अधिक प्रेरित थे।

विनोब जी का प्रमुख योगदान भू–दान आंदोलन में था, जो 18 अप्रैल 1951 को तेलांगना के पोचाम्पली से शुरू हुआ। धीरे–धीरे इस आंदोलन ने गति पकड़ी और पूरे भारत में घूम–घूम कर जमीदारों से गरीब किसानों का जमीन देने के लिये कहा। जमीन उपहार में मिलने के बाद पूर्वोत्तर गरीब लोगों को अपनी जमीन पर खेती करने के लिये दे दिया गया। भूदान आंदोलन लोगों को सामाजिक न्याय दिलाने में एक अलग प्रकार का तरीक था।

विनोब जी ने ब्रह्म विद्या मंदिर की स्थापन भी, इन महिलाओं को भोजन उत्पादन में स्थिरता और अहिंसात्मक तरीके से आत्मनिर्भर बनाने के लिए एक आश्रम और समुदाय है।

विनोब जी भी धार्मिक उदारता के एक महान विष्वास थे और वो अपने धर्म और अध्यापन से आम लोगो को ये उपदेष देने का प्रयास करते थे। वो भगवतगीता से अधिक प्रभावित और पांरपरिक मराठी भाषा में अनुवाद किया। गीता, कुरान और बाइबिल के उपदेष की व्याख्या की और कई धार्मिक लेख लिखे।

विनोब जी का निधन 15 नवंबर 1982 को महाराष्ट्र के वर्धा में हुआ। अपने पूरे जीवन भर संविधान के सिद्धांतो पर अमल करते रहे और समाज सेवा करें।

सम्पूर्ण भारत में व्याप्त अनेकों कुरीतियों को समाप्त करने के लिये हमारे देष के विभिन्न प्रांतों से अनेक समाज सुधारको ने देष को कुरीतियों से मुक्त करने के लिये अनेक आंदोलन और त्याग किये। इससे बाद समाज में अनेकों कुरीतियों का अन्त हुआ और स्त्रियों का विकास हुआ।[2]

1. महात्मा गंगादास और उनका काव्य–डॉ0 जगन्नाथ शर्मा 'हंस' पृ. 132, 305, 306, 309, 311।

2- hindikduniya.com.

उपसंहार

प्राचीन काल से ही भारतीय संस्कृति में गुरू और शिष्य का एक अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। गुरू का ज्ञान ही शिष्य को मानवता का ज्ञान देते है। गुरू की शिक्षा से ही शिष्य को अपने लक्ष्य की प्राप्ति होती है। गुरू और शिष्य का संबंध कुम्हार और मिट्टी के समान होता है।

संत गंगादास इतिहास के ऐसे गुरू है। जिन्होंने देश के प्रथम स्वतंत्रता संग्रमा की नायिका झांसी की रानी के गुरू थे। जिन्होंने रानी को देश की रक्षा लिए प्रेरणा दी। अपने गुरू के वचनों से प्रेरित होकर रानी ने देश की आजादी के लिए अपना संपूर्ण जीवन बलिदान कर दिया। झांसी की रानी का नाम इतिहास के पन्नों पर स्वर्ण अक्षरों में लिखा है। गुरू और शिष्य का संबंध अनमोल होता है। गुरू के मार्गदर्शन से ही शिष्य का संपूर्ण जीवन बदल जाता है। संत गंगादास के वचनों से प्रेरित होकर देशभक्तिों ने देश को गुलामी से मुक्ति कराने के लिए अनेको वीरों ने अपने जीवन को देश को समर्पित कर दिया।

भारतीय संस्कृति में गुरू का गान किया जाता है–

गुरूब्रह्मा गुरूविष्णु ,गुरूदेवो महेश्वरः।
गुरू साक्षात् परमब्रह्मा, तस्मौ श्री गुरूवे नमः ।।

भारतीय संस्कृति गुरू को ईश्वर के समान समझा जाता है। गुरू मानव जीवन का आधार स्तम्भ होता है। एक गुरू ही अपने शिष्य को मानवता तथा नैतिकता शिक्षा देता है।

हमारा देश गुरूओं और महात्माओं की जन्मभूमि है, जैसे – महात्मा बुद्ध, कबीर, सूर, तुलसी, संत गंगादास, रहीम आदि संत महात्माओं ने समाज और देश को अपने ज्ञान और दार्शनिक विचारों से मानव जाति के समाने एक नये समाज का रूप प्रस्तुत किया। समाज में फैली कुरीतियो और जातिवाद के प्रति मानव के विचारों पर प्रहार किया।

आधुनिक काल में समाज में फैली कुरीतियों और जातिवाद का विरोध होता रहता है। समय–समय पर समाज में समाज सुधारको का जन्म होता रहता है, जैसे– राजा राम मोहन राय, ईष्वर चन्द्र विद्यासागर, स्वामी विवेकानंद, महात्मा गांधी, डां0 अंबेडकर आदि समाज सुधारको ने समाज में फैली कुरीतियों के विरूद्ध आंदोलन किये। इन आंदोलनों के कारण समाज में व्याप्त अनेक कुरीतियों का अन्त हुआ, जैसे – सतीप्रथा, बालविवाह, देहजप्रथा आदि। स्त्रियों की शिक्षा का अधिकार और उन्हें आत्मनिर्भर बनाने का समाज सुधारकों ने अति प्रयास किया। स्त्रियों शिक्षा के लिए ज्योतिबा फुले ने गर्ल्स के लिए स्कूल खोला।

मानव के जीवन में संघर्ष का अपना ही महत्व है, क्योकि संघर्ष मय मानव ही इतिहास रचता है। जब किसी व्यक्ति के

अपने जीवन में कुछ अलग करने की चाह के कारण मानव अपने विचारो और कार्यों के माध्यम से मानव अपना नाम इतिहास के पन्नों मे लिखता है जैसे कलिदास जो संस्कृत के महान रचनाकार है। कालिदास एक कालजयी व्यक्ति है।

मानव अपने आस–पास के वातावरण से प्रभावित होकर वह स्वयं एक क्रान्तिकारी व्यक्ति का जन्म होता है। जैसे गुलामी के समय हमारे देश हजारों नवजवान देश को गुलामी से मुक्ति कराने के लिए क्रान्तिकारी बन गये। उन्होंने समाज और देश को एक नया भविष्य दिया। गांधी, भगत सिंह, सुभाषचन्द्र बोस आदि क्रान्तिकारियों ने अपने जीवन को देश के लिए बलिदान कर दिया।

जीरी की इस वक्त पर तौल रही ना माप।
अंधकार भया लोक में ये कलि के परताप,
ये कलि के परताप मती में पाप समाएं,
ऊंच गिनै ना नीच पाप ने धर्म गमाएं,
गंगादास कह मती हड़ी परजा सारी की,
घर–घर इक सिर्फ चोरी जारी की,

–संत गंगादास–कुण्डलियां

भारतीय संस्कृति में गुरूवों का जो स्थान है। वह अधिक महत्वपूर्ण है। मुझे इस शोध के माध्यम से गुरू के महत्व का ज्ञान प्राप्त हुआ है। मेरे जीवन में गुरूजनों का क्या महत्व है, इसका मैं शब्दों में वर्णन नही कर सकते। मानव के जीवन में गुरू

का क्या स्थान है? यह मानव जाति को बहुत अच्छे से ज्ञात है। यह संपूर्ण शोध गुरू और शिष्य के संबंधो तथा उनके दार्शनिक विचारों से समाज और देश मे रहने वाले मानव जाति पर क्या प्रभाव पड़ता है उसकी कल्पना गुरू स्वयं भी नही कर सकता है।